स्वप्न और सत्य

स्वप्न और सत्य

□

सुमेर सिंह दईया

□

नवीन प्रकाशन, बीकानेर

मूल्य आठ रुपये (८ ००)

सस्करण, १९७८
प्रकाशक नवीन प्रकाशन
हनुमान हत्था बीकानेर

सुमेरसिंह दईया
मुद्रक एजूकेशनल प्रेस
फड बाजार, बीकानेर

SWAPNA AUR SATYA (Story Collection)
BY SUMER SINGH DAIYA

कहानी की कहानी लिखना बहुत ही कठिन लेखन-कार्य है, अत मैं इससे बचकर निकलने की हमेशा कोशिश करता रहा हू। दूसर, कहानी और पाठक के बाच लेखक की यह उपस्थिति बिल्कुल अप्रासगिक है।

कहानी साहित्य की एक श्रेष्ठ विधा है। भीतर की प्रकृति तथा बाहर की आकृति म दोनो एकनिष्ठ भाव से जब सचमुच मिलत है, तो निश्चित रूप से कहानी अच्छी बनती है। फिर रूप के साथ भाव का ताल मेल बठ जाय ता कहना ही क्या! जब दखने की शक्ति है—मन चिन्तनशील है तब कहानी का रूप अपने आप सब ता है। उसका परिप्रेक्ष्य भी दूरव्यापी होता है।

यदि कहानी म साहित्यिक सौष्ठव न हो और जीवन के यथार्थ की मार्मिक अभिव्यक्ति न हो तो वह कला की कसौटी पर खरी उतरन म असमर्थ हो जाती है।

—सुमेर सिह दईया

अनुक्रम

वह सयत भाषा क । प्रयोग करती है ।

अभी वह कितने प्रसन्न भाव से दूध का गिलास लेकर आई था, किन्तु छाया न अपन क्रूर और क्रोधी स्वभाव के कारण उसे फौरन उलट दिया । क्या कहे ? बस वह प्रतिक्रिया विहीन-सी बन कर गर्दन लटकाये निश्चेष्ट खडी है ।

इधर छाया की आखें जल रही हैं । नथुने फूल रहे हैं, हाठ काप रह है । वह अब जोर जोर से चीखने लगी—'माया ! मैं तुझे अच्छी तरह जानती हू । तू जानबूझ कर मेरे लिये गदा दूध लेकर आई है। उसमे मक्खी ।'

माया पत्थर के समान जड । बिलकुल झूठा आरोप है, जिसकी तह म सिर्फ विद्वेष एव घृणा का विषाक्त धुआ घुट रहा है । फिर भी कोई प्रतिवाद कर नही पाती । न ही इस भाति के निराकरण का कोई उपयुक्त उपाय खोजती है । जाने कभी तो विवशता है अत चाह कर भी वह जबान खोल नही पाती ।

एक क्षण मे मा दौडी-दौडी आई । घबरा कर पूछ बैठी—'क्या हुआ ?'

'मर गई तुम्हारी बेटी !'—तीर की तरह सनसनाता हुआ जवाब छाया के मुह से आया । वह सरोष गरजी—'घर के सारे लोग मुझ से ऊब गये हैं । वे मन ही मन मेर मरने की प्रतीक्षा कर रहे हैं । कब प्राण निकले आर कब सबको छुटकारा मिले ।'

'चुप रह छाया !'—मा अधिक सहन न कर सकी । झिडकी के स्वर म अनिच्छा से बोल पडी—'इस तरह अशुभ नहीं बोला करते ।'

इससे वह अधिक भडक उठी । स्नेह मिश्रित इस कोमल झिडकी ने भी बिलकुल उल्टा असर डाला । छाया जहरीली नागिन की तरह

फुफकार उठी—'मैं सब जानती हू ।'

'क्या जानती है तू ?'

'तुम लोगो की नीयत बिगड गई ।'

'छाया !'

बड दुखी मन मे मा के मुह से यह कठोर शब्द निकला, पर दूसरे क्षण वे गदन लटकाय लटकाय कमरे से बाहर हो गई । उनके सम्पूर्ण चेहरे पर अस्वाभाविक उद्वेग है—असाधारण आतक है। इस कारण वे बहुत देर तक अपने आपको साध नही पाइ ।

छाया एक तो असाध्य रोग स पीडित है और ऊपर से है यह चिडचिडा स्वभाव ! जरा सी चूक पडते ही उसका यह रुग्ण और जर्जरित शरीर बेकाबू हो थर-थर कापने लगता है। ऐसे समय मे उसको सम्हाल पाना कितना कठिन है ! चिन्ता और परेशानी का वास्तविक कारण केवल यही है ।

उनके पीछे-पीछे अपमान की यत्रणा स उदास मुह लिये छोटी बहन माया भी चली गई। न जाने जीजी की क्या आदत है कि उसे देखते ही कठोर हो जाती है—एक निमम चट्टान की तरह। उसकी यह कटु भावना और निष्ठुर दृष्टि समझ म नही आई। आखिर उसके प्रति यह कडुवाहट और तिरस्कार क्यो है ? जबकि वह उसकी सेवा-टहल म मन वचन और कम से कभी कोई त्रुटि नही होने देती। बडी बहन की आखो मे घिरता हुआ घृणा एव विरक्ति का प्रीति-हीन भाव अना यास हृदय को स्पश कर जाता है तब अज्ञात भय से जैसे वह त्रस्त हो उठती हैं। इस करुणाहीन उपेक्षा के पीछे क्या है वह आज तक समझ नही पाई।

जब स द्वारका (छाया का पति) यहा आया है, छाया की बेरुखी और तिरस्कार का यह भाव अविश्वसनीय ढग से प्रखर हो गया

है। इसके साथ पता नहीं किस दुदमनीय भावना से प्रेरित हो वह कलेजे को चीर देने वाली निगाहों से घूरती रहती है। यू चुप रहने का अर्थ है दारुण उपेक्षा। वह सभी को सिर्फ सरयारमर तथा ममभेदी नजरों से वह लगातार बधती रहती है। करना शुरू करती है तो फिर चुप रहने का नाम तक नहीं लेती। विषले शब्दों की बौछार प्रत्येक के दिल को छलनी कर जाती है। लगता है, सामने सड परिवार के सभी व्यक्ति जैसे उसके चिर-वैरी हैं। अचम्भा तो इसका है कि कई वर्ष के तपेदिक से कमजोर शरीर में बोलने या जहर उगलने की इतनी शक्ति जाने कहा से आ जाती है। माना यह सामथ्य अभी तक क्षीण नहीं हुई है। यद्यपि भीतर से वह पूरी तरह खोखली हो चुकी है, मगर आज भी अपनी चुभती-तीखी आवाज से तमाम घर को हिला कर रख देती है। एक भयकर भूकम्प का झटका आसानी से देकर वह सब को डरा देती है।

उस दिन पति के आने का सुखद समाचार मिला तो छाया का रग तन एकाएक हर्षातिरेक से खिल उठा। उदास मन आन्तरिक खुशी के आवेग में मयूर की भाति नाचने लगा। इसी उत्तेजना में अपनी छोटी बहन माया को बुला कर उसने स्नेह-पूर्ण कण्ठ से कहा—'देख, मेरा खूबसूरत जूडा बना दे बिल्कुल नये फैशन का। कुछ नये कपडे भी निकाल दे और वे मोतियों जड़े सोने के कर्ण फूल हीरे का नाक का लौंग।

कहते-कहते छाया के सूखे चेहरे पर लाज की गहरी ललाई द्रुत गति से फैल गई। इसमें अनोखी और असाधारण द्युति है—लुभावनी आभा है।

इसमें सन्देह नहीं कि माया भी उसके अपूर्व हर्ष और आकस्मिक उल्लास में नि सकोच भाव से सम्मिलित हो गई।

अब छोटी बहन पीछे बैठी-बैठी वेश सवार कर नये आधुनिक ढङ्ग का जूडा बना रही है और बडी बहन के दर्शनाभिलाषी नेत्र कहीं शून्य में टिके हैं। इनमें मधुर स्वप्न की अनुरागमयी छाया तैर रही है। अनुरक्ति का यह अद्वितीय भाव उसके मुख को आलोकपूर्ण बना गया है जैसे आज कटुता और वितृष्णा से भरी उस छाया से यह छाया बिलकुल भिन्न है।

परन्तु यह सब अस्वाभाविक और अनपेक्षित नहीं लगता। किसी अज्ञात आवेग के वशीभूत हो धीरे धीरे वह मुग्ध भाव से बताती जा रही है कि पति उसे कितना चाहते हैं हृदय से कितना प्यार करते हैं।

अनजाने में वह आत्म विभोर स्थिति में परस्पर प्रेम की कुछ ऐसी गोपनीय बातें भी उगल देती है जिसे प्रत्येक विवाहित स्त्री जानबूझ कर छिपाने की कोशिश करती है। पर कई बातें ऐसी होती हैं जिन्हें सिर्फ आखों से कहा जाता है। वे जब लज्जित होठों तक आते-आते रुक जाती हैं तो मन के भीतर ज्वार सा उठने लगता है। ये उमंग और उत्साह के ऐसे क्षण हैं जब सारे बंधन अपने आप शिथिल एवं कमजोर पड जाते हैं। उस समय भावनाओं के स्रोत भी तरल हो उठते हैं। तब अपने आपको रोक पाना इतना सरल नहीं। बस रस की शीतल धारा में गोते लगाते हुए तृप्ति का आस्वादन करते रहो और आनन्द मग्न होते रहो। इसमें वास्तविक जीवन की कटुतायें तथा विषमतायें एकदम डूब जाती हैं। कुन्दन-सी खरी अकलुष आत्मा के दर्शन होते हैं जो दुर्लभ वस्तु है।

सुन कर कुंवारी माया का मुख सरोज बार-बार अरुण आभा पा जाता है। लगता है, जैसे किसी विशेष प्रयोजन से ये कुछ शब्द रूपी कंकड उसके हृदय-सरोवर में फेंक दिये गये हैं। अब बडी विचित्र

स्थिति है। अधर चुपके से थरथराने लगते है। मृग-नयनी चितवन में उषा की सलज्ज लाली उतर आती है। हृदय किसी अज्ञेय आवेग सवेग से धडकने लगता है। आप से आप गदन नीचे और नीचे झुकती चली जाती है।

छाया इस प्रतिक्रिया से बिल्कुल अनभिज्ञ है। माया उसके पीठ पीछे जा बैठी है। एकदम खामोश—मानो सास तक चलने की भी आवाज नही आती। इसलिये वह कुछ भी जान नही पाई।

वह सज सवर कर पति की प्रतीक्षा म अधैय स बैठी रही इस आशा मे कि पति की प्रथम दृष्टि केवल उस पर ही पडे। लेकिन इसके बावजूद भी द्वारका की परिक्रमा करती हुई उत्सुक निगाहें पीछे खडी माया पर ठहर गई। वह जाने कब कपडे बदल कर ठीक उसके पीछे आ खडी हुई।

क्षण भर म ही आशका ग्रस्त हृदय म अप्रत्याशित खलबली मच गई। क्या वजह है कि पति की आखो मे वह मिलनातुर भाव नही, जिसके लिये मन तरसता है? छाया को स्पष्ट रूप मे ज्ञात हो गया कि पति ने उसके शृ गार को अपरिचय की नजरो से देखा है, जो एक प्रकार की घोर उपेक्षा है।

हठात् चौक पडी वह! एक प्रश्न जो काटे-सा कई दिनो से उसके कलेजे म गडा हुआ था सहज ही म उसका सही उत्तर मिल गया।

पेड पर बैठी कोकिला क्या गाती है?

एक यह कि गान से उसका सुख मिलता है। दूसरा यह है कि नर-कोयल को मोहित करने के लिये। इनमें से कौन-सा उत्तर ठीक है। बहुत सोच-समझ के बाद दूसरा उत्तर ही ठीक लगा।

मन म एक टीस-सी उठी और वह ईर्ष्या-द्वेष का शिकार बन

कर उस पर बुरी तरह हावी हो गयी। छाया का मन परिवर्तन जो एक बार आरम्भ हुआ, वह फिर रुका नहीं। परन्तु आश्चर्य ! उसकी सुलगती आंखों में सर्वग्रासी ज्वाला के स्थान पर अचानक विवशता और बेबसी के आंसू छलक आये। परित्यक्त एवं तिरस्कृत होने की यह यातना उसकी रग रग में समा गई। उसने बड़े यत्न से अपने होंठों को भींचना चाहा, ताकि अपमान की यह दारुण यन्त्रणा एक चीख के रूप में मुंह से न निकल पड़े।

पति ने आगे बढ़ कर जब उसके निर्जीव से पड़े हाथों को अपने हाथों में लेना चाहा तो वह स्वयं को रोक न सकी। नागिन की तरह बल खाकर उसने एक भीषण फुफ्कार छोड़ी—'मेरे बाद तुम माया का अवश्य ख्याल रखना। भूलियेगा नहीं।'

यह गुस्सा—यह कड़वाहट ! दोनों एक साथ स्तब्ध रह गये। माया तड़प कर संयत न रह सकी। द्वारका का आभाहीन मुंह एकदम सूख गया।

यद्यपि पति ने तनिक सम्हल कर उसकी पीठ को बड़े प्यार से सहलाते हुये आर्द्र कण्ठ से कहा—'ऐसा नहीं कहते छाया रानी ! मैं किसी भी कीमत पर प्राण-पण से कोशिश करके तुम्हें बचाऊंगा। तुम्हें चिन्ता करने की कोई जरूरत नहीं।'

इतना सुनते ही छाया अकस्मात् करुण स्वर में सिसक पड़ी।

द्रवित भाव से पति ने उसका मुंह बन्द करने का प्रयत्न किया। सूखे पपड़ी जमे होंठों को अपने रसीले अधरों से टटोलते हुये द्वारका फिर कहने लगा—'मेरा विश्वास करो छाया ! मेरा विश्वास।'

इस पर छाया और भड़क उठी। विस्मय-जनक ढङ्ग से वह करुण-भाव अपने आप तिरोहित हो गया। उसके स्थान पर लाल लाल आंखों की प्रतिहिंसक दृष्टि पुनः चमकने लगी।

मैं सब जानती हूँ कि तुम किससे मिलने आते हो ।'

अपनी सगी बहन के प्रति ऐसी दुर्भावना ! ऐसा क्रूर सन्देह–ऐसा विश्वासघाती आरोप ! वह भी किसी और के लिये नहीं, अपनी ही छोटी बहन पर !

आह ।'

द्वारका अन्दर ही अन्दर तिलमिला उठा । अविश्वास तथा असन्तोष का यह निम्न-कोटि का भाव उसे जैसे चीरता चला गया। वह अपने आपको किस तरह साध पाये—प्रश्न बड़ा जटिल है ?

दूर खड़ी माया भी इस डाह की प्रतिध्वनि से सिर से पाँव तक सिहर उठी, मानो अनजाने में बिजली का करेंट छू गया हो। जाहिर है कि अब दोनों अपने-अपने होठों को कस कर भीतर के दारुण आवेग को रोकने का विफल प्रयास कर रहे हैं ।

इस बीच छाया के शुष्क अधरों पर अनायास निष्ठुर मुस्कान खेल गई । द्वारका के हृदय पर इस प्रकार का क्रूर आघात करके उसे अपूर्व सुख मिलता है । स्पष्टतः यह आत्म तृप्ति का अमानुषिक प्रयास है । मानसिक दृष्टि से असन्तुलित युवती के लिये यह सब सम्भव है ।

जब वह रात के मौन सन्नाटे में दूध और दलिया खाकर लेटी तो घनी देर तक स्वप्निल अवस्था में इधर उधर करवटें बदलती रही । उसे लगा कि द्वारका सौम्य और शांत मूर्ति बनकर उसके पास बैठा है । अगले क्षण वह मुग्ध भाव से एक समर्पिता की तरह अपने स्वामी के चरणों में लोट रही है । पति उसकी पीठ पर स्नेह पूर्ण थपकियें दे रहे हैं । वे बड़ी मृदुल हैं, आत्मीयता से भरी भरी और अपनत्व की भावना से ओत प्रोत ! मीठी-मीठी बातों का अब रस बरस रहा है । इस अनिर्वचनीय आनन्द की घड़ी में जाने कब उसकी मधुर सपनों से बोझिल पलकें चुपके से बन्द हो गई ।

"कौन ?"

माया और द्वारका।

पूरी आंखें खोल कर छाया ने देखा। सारी भ्रांति मिट गई।

पति के नयनों में छलकती हुई मादक मदिरा। मुख पर असामान्य प्रणय भाव! मन-मोहक वातावरण के बीच असाधारण चुप्पी साधे खड़ी है माया। उसकी लजीली चितवन में एक प्रकार की अतृप्ति है—आतुरता है! प्रणय-ज्वार में डूबी हुई एक आदिम प्यास!

'उफ! विश्वासघातियों का यह असह्य मिलन।

'मायाविनी।'

हठात् छाया आक्रान्त-पूर्ण स्वर में चिल्लाई— किन्तु याद रहे मैं भी एक छाया हूं। पीछा नहीं छोड़ूंगी।'

इस भयातुर कण्ठ को सुनकर पूरे घर में आतंक-सा छा गया। देखते-देखते छाया के पलंग के आस-पास एक छोटी मोटी भीड़ जमा हो गई।

क्या बात है छाया ?

लेकिन इस प्रश्न का उत्तर एक ऐसी दृष्टि से मिलता है जिसमें असीम घृणा एवं संशय का जहरीला धुआं है। उसमें बहुधा स्पष्ट दिखने वाली आकृतियां भी धुंधली पड़ जाती हैं।

इसके पश्चात् वह एकदम कड़वी हो गई।—बेहद कड़वी। विष से बुझी हुई!' न स्वयं चैन से बैठती है और न दूसरे घर वालों को बैठने देती है। इस कठोर दृष्टि से सभी सहमे हुए हैं, डरे हुए हैं। इस तनाव से वे अप्रभावित और शान्त स्थिर रह नहीं पाते।

अन्त में एक दिन इसका दुष्परिणाम तो भुगतना था। इस लापरवाही और असावधानी से रानी की तबीयत कुछ अधिक खराब हो गई।

नपदिक न अनुकूल अवसर दखकर छाया को बुरी तरह दबोच लिय।
इस विषम स्थिति मे वह एकाएक सम्हल न सकी।

उस दिन लम्बी वेहोशी के बाद अचानक उसने होश लिय
जिन्दगी और मौत की यह कशमकश देख कर परिवार के सभी स
चिंतित हैं—दुखी हैं। परशानी तो इस बात की है, वह पिछले
दिनो से अनावश्यक गुस्से तथा खीझ के कारण ठीक से दवा भी
लेती और न अच्छी तरह पथ्य भी रख पाती है।

माया की आखे लगातार रात्रि-जागरण से सूजी हुई हैं। पर
का चिन्ता शीण मुख किसी भी तरह छिप न सका। उस पर मानसि
क्लेश की धूमिल छाया स्थाई रूप से जम गई है—यह स्पष्ट है।

कुछ क्षण छाया अपनी छोटी बहन माया को पता नहीं कि
दृष्टि से अपलक देखती रही फिर धीमे कण्ठ से द्वारका से बोली—"
सुनिय ।

'हैं ।"

एक साथ सब सन्नाट म आ गये। ताज्जुब है आज कई दिनो
उपरान्त उसन अपना मुह खोला है।

पति उसके पलग के पास आ गय। भावावेग मे सहसा ग
रुध गया। अकृत्रिम खुशी के प्रवाह म वह बडे प्यार से बोला—"
कहो। तुम्हें क्या चाहिये ? बोलो ।'

'कर सकोगे ?'

वह स्थिर दृष्टि कही भीतर तक धुपके मे उतर गई। द्वारका
बचैनी और अकुलाहट इस बीच बढ गई। पत्नी की हथेली को अप
दोनो हथेलिया म दबाकर वह निष्ठा से कहने लगा— क्या नहीं। ज
करूगा ।

"कर कर सकोगे ।"

'हा हा। बिल्कुल ।—द्वारका उन निष्कम्प पलको की निगाहो के सामने काप सा गया। अपने उमड आये आसुओ का घूट पीकर वह उतावली म फिर बोला— 'कहो छायारानी, तुम्हे क्या चाहिये ?"

"कर कर क र ।'

"हा हा विश्वास करो मेरा ।'

"तो फिर मेरी शादी का जोडा और गहने जरा माया को पहना दो। उसे उसे मेरे सामने लाओ बस!"

क्षीण कण्ठ से धीरे धीरे कहकर छाया ने अपनी अंतिम इच्छा प्रकट की।

चुप। घडी भर के लिये सबकी आखो म एक मूक प्रश्न की सुर्खी दिखाई दी, मगर उसमे प्रतिवाद का कोई स्वर नही। वक्त बहुत थोडा है, अगर 'क्या' और किस लिये' के चक्कर म पड गये तो ? बस भी विधि की विडम्बना को कौन टाल सकता है।

कुछ ही देर मे माया शादी के जोडे और गहनो से सजकर सिमटी सिकुडी वहा पर आ गई। उसका लज्जानन अभी तक झुका हुआ है।

छोटी बहन को इस रूप मे देखकर छाया को सब प्रथम विस्मय हुआ। तब आकस्मिक हर्ष के साथ साथ अप्रत्याशित तृप्ति भी उसके म्लान मुख पर झलक आई, जिसमे राग द्वेष का सारा विष चमत्कारिक ढग से स्वत बह गया।

सच है, आज कई वर्ष पहले वाली सुदर-सलोनी छाया साक्षात् उसके सम्मुख खडी है। उसके चेहरे पर विकार की एक भी रेखा नही आर

न हृदय म रिमी प्रकार की दूषित भावना है। सब कुछ स्व
मुथरा और मम-स्पर्शी ! उसे अपनी सुडौल दह पर अभिमान है।
बडी-बडी रसवती आखो पर वह खुद ही मोहित है ! नई नवेला क
तरह दिल म आशा आकाक्षा का दीप जलाय-जलाय वह मार घर
ठुमकती हुई चलती है। उसे सजी-सवरी देखकर पति रीझ रीझ ज
है और भावनाओ क ज्वार मे स्वाभाविक रूप ने बह जाते है।

निश्चय ही वही ना है यह ! पति का दन के लिये उस
पास असीम सुख है तृप्ति है उल्लास है। साथ ही है जीवन दायि
अमृत ! उसका पान करके कोई भी पति अपनत्व से भर स्ने
सागर मे तत्काल डूब जाता है यद्यपि स्त्री के पास अर्पित शरीर
रूप म एक सुन्दर और बहुमूल्य हीरा है जिसकी वजह से उस
जीवन सार्थक है और नारीत्व की गरिमा से परिपूर्ण है।

छाया के नेत्र अनायास अपूर्व सुख से चमक उठे। वह ज
निर्विकार और निर्विरोध बनकर किसी भाव-समाधि मे तल्लीन
अचेत य लोक म पहुँच गई, फिर आनन्द विभोर कण्ठ से फुसफुसाई
जरा सुनिये ।'

'कहो ।"—द्वारका आर्द्र और उदास स्वर मे तु
बोला।

"वो देखो, तुम्हारी छाया तुम्हारी छा या वहा
खडी है वो द खो ।"

कहते-कहते आवाज रुक गई। इसका अर्थ समझते
नही लगी।

'नही नही ।"—द्वारका भयात्त कण्ठ से चिल्लाया
छाया नही ।'

अब उसकी आशा म टूटन है यातना है और है कातर सी याचना भी ! थरथराते होठो तक आकर कुछ शब्द तडफ कर रह गये जैसे उन्हें कोई ध्वनि नही मिली। उन निस्पन्द पलको मे सहसा एक अनोखा तेज सिमट आया फिर दृष्टिहीन पुतलिय आसुओ म डूबकर हृदय वेधी बन गई ।

नही नही छाया ।'

व्यथातुर स्वर म रहकर द्वारका अब पत्नी पर भुक आया। लेकिन पता चला कि छाया के प्राण कब के निकल चुके है। उसकी पथराइ मुद्रा न सभी को एक साथ रुला दिया ।

'मुझे इतनी बडी सजा मत दो छाया मत दो ।

पत्नी की धडकनहीन निर्जीव छाती पर अपना सिर रख कर द्वारका असयत कण्ठ से फूट पडा।

शोक और विषाद की यह घडी भी कितनी हृदय विदारक है— कितनी दु सह ! यह तो शोकाकुल मन ही जानता है।

•

अतीत का प्रेत

एक हैं ठाकुर हरनाम सिंह—स्वाभाविक रूप से उदास निराश और थके हुये। निस्तेज और म्लान मुख पर दीन हीन आखे ऐसे चमक रही हैं जैसे राख के ढेर म दबी चिनगारियें। उनमे अतीत की पुनीत और सुखद स्मृतिया को सहेज कर रखने की भी क्षमता नही है। लगता है, वे अन्ततम म अकेले हैं और जीवन मे हैं असम्पृक्त। एक भावना हीन व्यक्ति की तरह वे अपने पथ पर चुपचाप चले जा रहे हैं नि सग, जिसका कोई बन्धु नही होता। न ही कोई उसका साथी होता है और न हमदद।

इस समय वे एक फटे पुराने मले मसनद पर अधलेटी अवस्था म खामोश बैठे चादी से मढ़ा हुक्का गुडगुडा रहे हैं। यद्यपि उसकी कान्ति

कभी की मलिन पड चुकी है, फिर भी ठाकुर साहब को इससे एक आतरिक लगाव है। इसका मोह वे सहज ही मे छोड नही पाते। कुछ भी हो, जब इस शात वातावरण मे उसकी आवाज बार-बार सुनाई पड़ती है तो वह इतनी अप्रिय और कणकटु नही लगती। इसके विपरीत वह मन को भाती है, दिल को अच्छी लगती है। इन एकात के क्षणो मे यह स्वर बराबर बना रहे, बस यही कामना है।

एक है हवेली तीन मजिली। प्रत्येक मजिल मे जीवन का आलोक शून्य म विलीन। लुटे हुए धनिक की आखो की तरह सूनी और वीरान। कुलीन हिन्दू विधवा के समान यह अपने बीते वैभव तथा उजड सौभाग्य पर निरतर अश्रु-स्राव करती हुई। इन मम विदारक आसुओ का कोई हिसाब नही।

कहा हैं वे 'खम्मा' करने वाले नौकर-चाकर?

कहा हैं वे 'अन्नदाता' कहने वाले नत-मस्तक प्रजा-जन?

कहा हैं वे हसती खिलखिलाती सुदर और जवान दासिया?

ऐसा लगता है, माना जीवन की शीतल, सरस तथा सुमधुर जल धारा कही मरुभूमि म आकर सूख गई। दुर्भाग्य से उसका जीवन-दायिनी स्रोत ही किसी विराट शून्य म अविश्वसनीय ढग से ओझल हो गया।

'आह!'—स्मरण करते-करते अचानक ठाकुर साहब के मुह से मद आह अपने आप निकल पडी।

सध्याकालीन छाया जैसे ही घनी हुई, हरनाम सिंह ने नस-नस मे अनपेक्षित तनाव-सा अनुभव किया। मन न जाने कैसे-कसे होने लगा। देखते-देखते पूरे वदन म अनावश्यक कसाव-सा आ गया। वास्तव म वे स्वभाव से विवश हैं—आदत से मजबूर है। वैसे भी उद्दात, बडा

विचित्र स्वभाव पाया है। आज इस समय भी वे भूलते नहीं। मदिरा की मादक गंध। उन्मुक्त एवं स्वच्छंद वातावरण। सुन्दर-सलोनी स्त्रियों का सान्निध्य। रुन झुन पायल की झंकार! हठात् सुप्त वासना हृदय में करवट लेने लगती है। तब यौन सुख की अंधी पिपासा समस्त चेतना पर छा जाती है और ... और ... तब ...।

परन्तु आज कुछ भी तो नहीं है। न मदिरा न मदिर वातावरण और न वे गोरी-गोरी कोमलांगी सुन्दरियां! उनके पास न मे घड़ी भर बैठ कर जीवन का ऐसा सुख लाभ अर्जित किया जाता है, जिसके लिये अब भी लोभी और लोलुप मन तरसता है। सच पूछो तो अधरे के वतुल अपने शून्य अंतराल में उन सभी को आत्म-सात् कर चुके हैं।

आज क्या भोजन करने की बिल्कुल इच्छा नहीं है?" —एक पल ठिठक कर सप्रश्न दृष्टि से पति को निहारते हुए बड़ी ठकुराइन ने पूछ लिया।

ठाकुर साहब एकाएक सकपकाये। अंतिम फूंक खींचने की चेष्टा में उन्होंने हुक्के की नली फिर से मुंह में डाली पर तभी ज्ञात हुआ कि वह कभी का बुझ चुका है। अंगारे शांत हैं और राख की मोटी परत उन पर जम गई है।

पल भर वे विलष्ट भाव में उसे ताकते रहे बाद में फुर्ती से पालथी मारकर मसनद पर बैठ गये। उन्होंने हुक्के की चिलम नली पर से उतारी और मुंह के पास लाकर जोर से लम्बी फूंक मारी। कोई लाभ नहीं हुआ। अलबत्ता राख उड़-उड़ कर,उनके मुंह और आंखों में गिर पड़ी। इससे हल्का सा खांसी का दौर शुरू हो गया। उनके नेत्र भी अश्रु-कणों से भीग गये और साथ ही माथे पर थोड़ी थोड़ी पसीने की नमी झलक आई।

"पता नहीं बेकार में बैठे-बैठे क्या सोचते रहते हो?" — अनचाहे पत्नी का स्वर करुणाप्लावित एवं सहानुभूतिपूर्ण हो गया।

"कुछ भी तो नहीं।"

हरनामसिंह ने टालने की असफल कोशिश की।

"यह तो चेहरा ही दर्पण की तरह बता रहा है ।"

इसका उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया।

फिर उनके सूखे होठों पर किसी न किसी तरह एक फीकी सी ओजहीन मुस्कान की महीन रेखा उभर आई। पर है यह प्रभावशाली।

आश्चर्य!

अक्सर पत्नी दंग रह जाती है। यह निश्चेष्ट सा भाव— यह निर्लिप्त सी प्रतिक्रिया! बिल्कुल अस्वाभाविक है, अविश्वसनीय है। इस व्यक्तिगत व्यग्रता और परिवेश की घुटन में उनका यह दो टूक उत्तर पर्याप्त नहीं है। हैरानी तो तब होती है जब वे अपनी जीवन संगिनी के सम्मुख भी स्पष्ट नहीं हो पाते। इस सम्बन्ध में किसी स्पष्टीकरण की जैसे वे आवश्यकता ही अनुभव नहीं करते।

इस बीच ठाकुर साहब ने एक गहरी दृष्टि पत्नी पर डाली। बिखरे अधपके बाल ढलका ढलका ओढ़नी का आंचल, राख व पसीने से क्लान्त और शिथिल गात। उसे देखकर विचित्र-सी करुणा का एहसास होता है मानो सन्तप्त धरती के अन्तःकरण में से दीर्घ उसासें निकल रही हैं। उन्हें समेटने का साहस किसी में भी नहीं। ऊपर विस्तृत आकाश है नीचे है गहरा रसातल! उन दोनों के बीच में अटकी हुई है उन उसासों की मटमैली धूल!

इस पर भी स्नेह और आत्मीयता से भरी-भरी दो आंखें अपने

निराले आन म अभी तक चमकती हैं। उनम दप है, सकल्प बोझ झरता है। यद्यपि समय के थपेडा ने पलका क घेर मे काले धब्ब स्थायी रूप से लगा दिये है, तथापि उनम टूटने या बिखराव का आत चाता सुनाई नहीं दता। चहर पर पडी अनेक सलवटे एव गुजर हुय लम्ब सफर की भली भाति याद अवश्य दिलाती हैं। उनका तात्पय स्पष्ट है कि बीच बीच म कई झझावात आये—खतरनाक तूफान निकल गये, मगर मानुम हीनता का कोई भी दुबल भाव उन्ह तोड नहीं सका। व अब भी नदी के किनारे के पड की तरह ऊपर आसमान मे सिर ऊचा किये हुए हैं अडिग—अविचल!

उधर से ध्यान हटा कर हरनामसिंह न पत्नी द्वारा लाया गया भोजन का थाल जरा अनमनी नजरा से दखा। विडम्बना तो यह है कि यह थाल भी उनकी जीर्ण शीर्ण अवस्था की ओर अपरोक्ष रूप स निरन्तर सकेत करता है।

उसम एक तरफ कटोरी म बासी छाछ की पीली-पीली कढी है। दूसरी कटोरी म है पतली-पतली दाल! शायद यह मूग, माठ या चने की भी हा सकती है। फिर किसी मात्रा मे उनका मिश्रण भी हा सकता है इस सम्भावना स बिल्कुल इकार नही कर सकते।

उन्होंने गौर से देखने का जरूरत नही समझी। एक मामूली और साधारण सी बात के लिए क्या परशान हो? वे अच्छी तरह जानते हैं कि इसमे मिच मसाले का स्वाद नाम मात्र का है। कहने भर को उसम घी डाला है। वह भी इस महगी और तगी के जमाने म पूरा नहीं पडता। एक ओर बाजर की अनगढ रोटिया रखी हैं जिनमे जलन स कही कही काले दाग लगे हैं। इससे प्राय रोटी बेस्वाद हो जाती है। मन मसोस कर उन पर ही गुजारा करना पडता है। क्या करें?

ता भी उनम से उठन वाली विचित्र गध उनकी क्षुधा का

असामान्य रूप से जाग्रत कर जाती है। उसके आवेग को एकदम रोक पाना असम्भव लगता है। तब अगले क्षण उस थाल को देख कर हृदय म वितृष्णा एव विक्षोभ का ववण्डर उठ कर चतुर्दिक व्याप्त जाता है। एक तीखी अन्तर-क्षोभ ! न दवा सकने वाला आक्रोश न की जा सकने वाला असतोष ! यह अन्दर ही अन्दर व्यापक रोष को भडकाता है। किन्तु यह सुलगता हुआ ताप बिल्कुल असमर्थ और निरर्थक है ! एक प्रकार से प्रभावहीन और अशक्त ! वस अन्तर मुखी होकर अन्तस म वह निष्क्रिय-सी घुटन पैदा करता है। इसकी यह अन्तिम तथा लक्ष्य हीन प्रतिक्रिया है।

'भाग्य की बात !' —सोचते सोचते बडी उदासी से वे अपने मन म कह उठते हैं।

तभी उन्हे वैभवशाली दिनो का अपना भोजन-कक्ष स्मरण हो आता है जो उनकी ऐश्वय की आकाक्षा से जगमगाता था—साथ ही उनकी खुशहाली की ओर स्पष्ट सकेत करता था।

उस समय सदव न जाने कितने प्रकार के मास, कोफ्ते, कवाव और सुगन्धित पुलाव से थाल भर रहते थे। हिरन की टाग और जगली मुर्गियो का उन्हे बेहद शौक था। खुद शिकार करने जाते थे। कभी तीतर कभी बटेर कभी सूअर और कभी पता नही किन किन पक्षियो या जानवरो को मार कर वे ले आते थे। अपने दोस्तो की पसन्द का भी पूरा पूरा ख्याल रखा जाता था।

इनके अलावा मिठाई और फलो की कोई कमी नही थी, एक से एक बढ कर ! देसी और विदेशी शराब की वोतलें तो उसमे काफी तादाद मे फर्श पर लुढका करती थी। कहने की आवश्यकता नही कि कई नौकरो के पेट तो केवल बची हुई जूठन से ही भर जाते थे।

मेज पर रखी उन ताजी-ताजी बनी चीजो मे से ऐसी सौंधी-

सौंधी और नशीली गंध उड़ा करती थी कि उनको देखने मात्र से निमिष भर में क्षुधातुर मन तृप्त हो जाता था।

"आह !

अब तो उन चीजों को याद करते-करते मुँह में पानी भर आता है। अनड़ियों में ऐंठन सी होने लगती है, जो बहुत चाहने के बावजूद भी नहीं रुकती। कभी-कभी खाने की इच्छा इतनी तीव्र हो उठती है कि पूछो मत। मन मार कर बड़े खेद के साथ चुप्पी साध लेनी पड़ती है। इसके अतिरिक्त दूसरा कोई विकल्प नहीं।

हरनामसिंह ने बड़े निरीह भाव से अनिच्छा-पूर्वक एक ग्रास तोड़ा। मुँह में रखते ही कसैला सा स्वाद आया। वह बुरी तरह बिगड़ गया। इसके साथ ही अपने प्रति लाचारी और बेचारगी का बोध अत्यन्त प्रखर हो गया, जो आत्म-वेधी बन कर भीतर ही भीतर यातना को बढ़ाता है। दिल में यह असह्य कसक पैदा करता है जिस पर विजय प्राप्त करने की आशा केवल दुराशा मात्र है। यह एक प्रकार की अनधिकार चेष्टा भी है जो उन जैसे सामर्थ्य-हीन और अभाव-ग्रस्त व्यक्ति के लिए शोभा की बात नहीं।

ठकुराइन पास बैठ कर बड़े श्रद्धा भाव से पंखा झलती है। वे धीरे धीरे किसी न किसी तरह हृदय की अस्थिरता को दबा कर भोजन करने में व्यस्त हो जाते हैं, मानो इस बीच कुछ हुआ ही न हो।

भोजनादि से निवृत्त होकर ठाकुर साहब तृप्ति की एक डकार लेते हैं, फिर चुपचाप अकेले शांतिपूर्वक बिस्तर पर लेट जाते हैं। आंख में नींद कहां ? जाने कैसी तो भावना से वे आहिस्ता आहिस्ता भरते जा रहे हैं। वे जैसे असन्तुष्ट हैं। असंतोष भी भीतरी है। उससे छुटकारा पाने का सुख और संतोष कदाचित् उनके भाग्य में नहीं है

अजनबी निगाहों से वे छत को अपलक तकते रहते हैं। ऐसा भान होता है, मानो वे उसके पीछे की कठोरता को भेद लेना चाहती ह। फिर वह छत भी चमत्कारिक ढग से अतर्धान हा जाती है। रह जाता है केवल स्मृतियो का झिलमिलाता हुआ सम्मोहन जाल। उसम उलझने के पश्चात् वे बिल्कुल कल्पना हीन तथा अनुभव शून्य नही लगते। वत मान की विसगतियो से चिन्ता मुक्त करके यह मोहिनी छाया उन्हे अपने शिकजे में पूरी तरह कस लेती है।

वैसे प्रत्येक व्यक्ति को अपना अतीत प्रीतिकर ही नही वल्कि मायावी लगता है। इसम आज के कसमसाते जीवन की धूप छाह तक अदृश्य हो जाती है। बस विगत के स्वप्नलोक म मुक्त भाव से विचरण करके आत्म विस्मृत होने को मन व्यग्र हो उठता है।

यौवन और किशोर वय का सधिकाल। जब मधुर स्वप्न पलको की छाया म सुबह की धूप की तरह खिले रहते हैं। कल्पनायें बहुरगी होकर इन्द्रधनुष के समान हृदयाकाश मे तन जाती ह। उनमे नई उमग है—नया उत्साह है। नये आवेग सवेग तरानों की तरह होठो पर आकर रुके रुके रहते है। उस समय जीवन और भी मधुर तथा सरस लगता है वहा कई आशाये कई आकाक्षाये और कई अभीप्साये मूर्त रूप लेना चाहती हैं। विचारो और भावनाओ का आलोडन बीच मे आने वाली सारी बाधाओं को तोड डालता है। उस समय चेहरे पर सौन्दय बोध की निराली दीप्ति ही नही एक रहस्य मय दप की चमक भी रहती है।

नये जीवन मे प्रवेश करने के उद्देश्य से वे मेयो कॉलेज अजमेर से लौट कर गाव की इस हवेली के सम्मुख मौन खड़े रहे। देर तक इस भव्य भवन को वे चकित नेत्रो से देखते रहे, मानो यह उनके लिये एकदम नया है—अनोखा है। लाल पत्थर तथा मकराने से बना यह

विशाल भवन गाव म अत्यत दर्शनीय और बजाट है। जैसे काई जन पानी पर एक सुदर कमल खिला हुआ है। वह अनुपम है—लुभावना है। उसकी समृद्धि देखत ही बनती है।

उसम पच्चीकारी और कलात्मक नक्काशी की छटा बडी ही नयनाभिराम है। कहीं-कहीं तो कलाकार की परिष्कृत प्रतिभा स्वय अपने मुह स बात कर अपना परिचय देती है। उनके पितामह की अभिरुचि तथा भवन निर्माण कला के प्रति उनकी सहज स्वाभाविक चेतना का यह शानदार स्मारक है। यह कदापि मिथ्या धारणा नहीं है। एक नजर इसे देखने पर सारा भ्रम दूर हो जाता है।

सवप्रथम प्रभात काल म बाल-रवि की अरुण रश्मिया हवेली के गुम्बदो का स्पर्श करती है तो ऐसा लगता है जैसे इसके पीतल मण्डित कलशो का वे अभिषेक कर रही हैं। विजय का प्रतीक सिंह द्वार तथा मगल अथवा स्वास्ति की चिरस्मरणीय कामना से प्रेरित तोरण उनके गौरव म चार चाँद लगा रहे हैं। उसके कक्षो म अनकानेक दास प्रसन्न वदन विचरण करते रहते है। दासियो के पग-नूपुरो से सारी हवेली का वातावरण अनुगुजित रहता है। इसम किसी भी तरह का व्यतिक्रम उपस्थित नहीं होता।

नई रोशनी की ऐनक लगाय तरुण हरनामसिंह को इस हवेली की यह शोभा भी बिल्कुल पसद नहीं आई। पुराने किस्म की यह शान शौकत उस स्वप्न बिहारी की कल्पना के एकदम विपरीत निकली। वह उन्हें आरम्भ से ही असुदर रगहीन और रसहीन प्रतीत हुई, जिसमें साम ती सस्कारो से युक्त परम्परागत जीवन एक छोटी-सी तलया के पानी की तरह सदा के लिए अवरुद्ध है। रूढियो के बधन उसे दिन प्रति दिन गति शून्य बना रहे है। ज्ञात हुआ कि इसके अन्तराल में फल अधकार ने अभी तक आधुनिक सभ्यता के प्रकाश की एक किरण

भी नहीं दखी। उसकी सासो मे कड़ुवाहट है—बेचैनी है, जो काने-काने म हर तरफ व्याप्त है।

निश्चय ही वे गुरू से परम्परावादी नही है। मन की यह सकीर्णता, जो रूढिया और पुराने ससारा से सलग्न रहने के लिये विवश करती है, उनके स्वभाव से कतई मेल नही खाती। मर्यादाओ मे बधे रहने का आडम्बर भी यहा बनावटी है—कृत्रिम है। उसम किसी प्रकार की सच्चाई नही। अब उनकी स्थिति यहा आकर उस राजहम के समान हो गई जो भूल से मान-सरोवर भील का माह त्याग कर इस अजान और अपरिचित वीराने म भटक गया है।

दिन भर अपढ और गवार लागा का जमघट। चारा तरफ चापलूस और खुशामद पसन्द नौकरा का अनचाहा घेरा। रनिवास की मनचली वहुआ दासिया के अश्लील कटाक्ष। विचित्र जीवन है यहा का। देख कर हैरानी हाती है। बाद मे पता चला कि ये सब उन्हे खुश करने की गज से या फिर अपना कृपालु बनाने की नीयत से यह बनावटी नाटक अभिनीत किया जा रहा है।

प्रत्यक दिन—ठीक सुबह होत ही—उनके पिता एक छोटा सा दरबार लगात थे। उसमे गाव के प्र य सभी जाने माने लोग शामिल होते थे। उनको अफीम के पानी के साथ घोल कर बनाया गया 'गालवा' पिलात थे। इसके लिए कोई भी मना नही करता था। यू भी आज्ञा का उल्लघन करना 'दरबार' की तौहीन है, जिसे किसी भी सूरत म बर्दाश्त नही क सकते—यह मानी हुई बात है। यह देवता' का चरणामृत है इसे कृतज्ञ भाव से स्वीकार करो—बस!

रात की महफिल कही अधिक रगीन और मादक होती थी। उसम ऐश्वय और भोग के प्राय सभी साधन वहा उपलब्ध थे। वासना की नशीली हवा एक ओर निर्बाध गति से बहती थी तो दूसरी ओर

मदिरा की मस्ती म हृदय डूब डूब जाते थे। घुंघरू की रुन
झकार के सहारे व मतवाले रसिक न जाने किस लोक मे आसानी
पहुँच जाते थे। फिर उनके सम्मुख वर्तमान का अस्तित्व ही जसे न
हो जाता था।

तरुण युवक ने जिज्ञासावश कई नौकरों से अनेक प्रश्न कर डा
किन्तु किसी का भी सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिला। उनके पिता
इस गोपनीय और रहस्यमय जीवन की ये गतिविधियें जहा उन
उत्सुकता बढाती हैं वहा दिल मे अधिकाधिक शकाओ का भी जन्म है
है। रहस्य पर से आवरण हट बिना चैन कहा ?

इधर हवेली के मुह लगे नौकर उनकी सासारिक ज्ञान से
बुद्धि पर मदमय हस पडते हैं। अविवेकी हृदय और अज्ञानी बुद्धि
एक नौकर को इन पर तरस आ गया। ज्ञान चक्षु खोलने के अभि
से उसने जान बूझ कर सुअवसर प्रदान किया। हो सकता है कि इ
पीछे विशेष कृपा पात्र बनने का मोह अथवा आशा से अधिक बख्श
पाने का लाभ रहा हो। इन दोनो की मिली जुली भावना भी सक्रिय
ठीक ठीक कह नहीं सकते।

हरनामसिंह की आखे तो देखते ही फटी रह गई। उस क
का सम्पूर्ण दृश्य अत्यन्त कामोत्तेजक और रोमाचपूर्ण है। वहा
हवा म मादकता है वातावरण म है उद्दीपन का अनोखा भाव !

ाशे की हालत म उनके पिता और मित्रगण झूम रहे है। उ
गल का हार बनी है अर्द्ध नग्न वेश्याय और रखैल।

अचानक उनके पिता ने एक निर्लज्ज हसी के बीच आदेश दिया
"बत्ती बुझाओ और बत्ती जलाओ।"

तुरन्त उनके आदेश का पालन हुआ। श्वेत और पीले प्रक

के स्यान पर हरा म द म द प्रकाश पूरे कमरे को उजागर कर गया।

दूसरा आदेश केवल वेश्याओं और रखैला के लिए है।

"सार कपडे उतारो और ।"

खिलवाड कर रहे ठाकुर साहब के आनन्दी चेहरे की एक एक रेखा बदल गई। उस पर कुटिल कामी पुरुष की स्वच्छ द हसी फल गई।

हरनामसिंह का स्वच्छ हृदय सहसा वितृष्णा से भर गया।

उफ ! बेशर्मी की हद हो गई ! काम वासना का यह घिनौना और नगा रूप न तो उन्होंने कभी देखा है और न कभी सुना है। छि छि यहा मनुष्य और पशु के बीच फिर कैसा अन्तर रह गया है।

कुछ देर यह प्रश्न उनके अ तर म अनुत्तरित ही ध्वनित प्रति ध्वनित होता रहा। इसके पश्चात् पहली बार व अपने पिता के प्रति अनास्था तथा अश्रद्धा स भर उठे। यह प्रतिक्रिया असगत नही लगती। उनके स्वेच्छाचारी और व्यभिचारी चरित्र का यह अनावृत्त पक्ष उनकी कल्पना के सवथा प्रतिकूल निकला।

अब वे अपने आन्तरिक क्षोभ पर कुछ पला के लिये भी अकुश नही रख सके।

'भला यह भी कोई मनोरजन का सभ्य तरीका है ! कामाध पशु सा यह कुत्सित व्यवहार। वासना और भोग मे डूबा यह निकृष्ट आचरण ! अफीम और शराब ! गाव के लोगो मे जान-बूझ कर इनकी बुरी आदते डाल कर व उन्हे एक तरह से अपाहिज और निकम्मे पशु बना रहे है। इसलिये कि उनकी क्रिया शक्ति बिल्कुल नष्ट हो जाय।

निस्सदेह यह पशाचिक कार्य है। इसके द्वारा भोले भाले ग्रामीण ज
के आत्म बल को समाप्त करने का यह प्रत्यक्ष षडयन्त्र है। यह नै
अध पतन की पराकाष्ठा है। इससे जान पडता है कि पूरे गाव
जीवन ज्योति ही क्रमश लोप हो रही है। इसका सारा दोष के
अपने क्रूर पिता पर है दूसरे किसी पर नही।"

रात भर व अ तर्क्षोभ की बेचैनी म बिस्तर पर पड-पड इध
उधर करवट बदलत रह। पिता का यह नग्न खेल बार बार उन
उनींदी आखो मे स्वप्नवत् परिक्रमा करता रहा। दिल म एक करा
कचोट के साथ वह अपनी स्थायी अ तचु भत छोड जाता। वे चाह
भी अपने आपको सुस्थिर नही कर पाये।

अशात हृदय म विरोध का प्रखर भाव लिय दूसर दिन ह
नार्मासह ने अपन पिता स जब इस सम्ब ध मे साहसपूवक कहा तो
एकदम विद्रूप की हसी हस पडे। लगता है जैसे वे लज्जा, सतो
विवक और साजन्य ता कदाचित् घोल कर पी गये ह। इस पर
उन्होने कोई स्पष्ट रूप से प्रतिवाद नही किया। न ही अपने व्यक्ति
जीवन मे हस्तक्षेप करन के दुस्साहस का देखकर वे एकाएक उत्तेजित हुे
वे पूववत् शात और अविचलित रहे।

उन्होने समझदारी से काम लिया।

"देखो कु वर तुम अभी बच्चे हो। जीवन के उतार च
को तुमन देखा नही है। हम लोगो की दिनचर्या क्या है, इससे
तुम एकदम अनजान हो। हमारी हस्ती क्या है इससे भी बेखब
हो। फिर बाद म अनुभव की कसौटी पर चढोगे तो अपने आप स
समझ जाओगे।

पिता की आवाज म अनचाहे तनाव सा आ गया और सुता

व्यग्य कलेजे मे कसक सी पदा करने लगा।

वे एक अनानी की तरह चक्कर मे पड गय। उनकी शिक्षित बुद्धि भी सहसा समझ न सकी कि उनके कहने का अभिप्राय क्या है ?

इस विस्मयाभिभूत नन्हा की प्रश्न-वाचक दृष्टि का उत्तर देने म पिताजी को कोई विशेष देरी नही लगी। एक क्षण का विलम्ब किय बिना वे दृढ स्वर मे बोल—'कुवर ! तुम यह चाहते हो कि गाव के इन तमाम गवार लोगो को पढा लिखा कर इसान बना दिया जाय ! नही, कदापि नही। तुम यहा भूल कर रहे हो। अगर ये जहिल-गवार लोग शिक्षित हो गय तो जानते हो—क्या करेंगे ?—पगने, ये अपना हक मागेंगे। हमार द्वारा चलाई जा रही व्यवस्था म बाधा डालेंगे। यह हम नही चाहते। क्योकि व्यवस्था अपने लाभ और स्वाथ के लिए हमने ही बडी बरहमी से जबदस्ती उन पर थापी है। शोषण का यह चक्कर अगर बन्द हो गया तो ये हमारे चगुल से निकल कर हम आखे दिखायेंगे। हो सकता है कि इन्हे हमार स्वाथ का भली भाति बोध हो जाय तब तब ।'

पिता की तीखी निगाहे मानो अतर भेदी हो गइ। एक लघु अतराल के बाद उनके शब्दो मे सच्चाई का ऐसा वास्तविक रूप प्रकट होने लगा, जो अभी तक उनके लिए बिल्कुल अज्ञात था।

रहस्यमय ढग से आखे नचा कर ठाकुर साहब पुन कहने लगे—"बता, फिर कौन पालतू कुत्ते की तरह हमारी गुलामी करेगा ? कौन हमे अन्नदाता और देवता समझ कर पूजा करेगा ? कौन हमारी लडकियो के दहेज म बतनो और जानवरो के साथ जाकर स्वामी भक्ति का उच्च आदश पेश करेगा ? बोल—बोल ।'

प्रश्न पूछ कर पिता न अवाक खडे कुवर की आखो मे झाका।

लेकिन वहा आदराय और विस्मय के सिवाय कुछ भी नही मिला।

'समझा कुछ।' —अल्प-बुद्धि बेटे पर तरस खाकर ठाकुर साहब जरा आवेश म फिर बोले— इसलिए हम शराब और अफीम का आदी बनाकर इन्हे पालतू जानवर की तरह जीना सिखाते हैं। अपने सुख के लिये इन्हे यह जहर देते हैं ताकि इनका पशुपन हम पर कभी हावी न हो जाय। विशेषकर इसका ख्याल रखा जाता है। यू यह हमारी मजबूरी भी है।'

इस रहस्योद्घाटन से तरुण युवक एकदम सन्नाटे म आ गया।

पिता के होठो पर अकस्मात एक वक्र रेखा उभर आई। वे एक पिशाच की तरह निर्दय भाव से मुस्कराये। अब अपनी बात का अंतिम रूप देने के उद्देश्य से बताने लगे—' अब ये सारी जिन्दगी हमारे द्वार पर असहाय और निकम्मे बन कर पडे रहेगे—आखे मूदे जड-बुद्धि। बस जरूरत है कि एक टुकडा डालने की—बनावटी कृपा भाव से सिर सहलाने की। ये तुम्हारे पैरो मे कृतज्ञ बनकर पूछ हिलाते रहेगे, फिर तुम निश्चिंत होकर ऐश करोगे।"

इतना कहते-कहते उनके चेहरे पर विचित्र-सा भाव आ गया। ठहर कर वे गम्भीर आवाज मे पुन बोले—' बेटे! जानते हो, सिर्फ इन्हे बर्बाद करके ही तुम आबाद हो सकते हो। याद रहे, जिस दिन ये आबाद हो जायेंगे उस दिन तुम्हारा कोई ठिकाना नही रहेगा।"

इस भविष्य वाणी के रूप म उन्हे एक गुरु मन्त्र मिला है जिसकी प्रेरणा से आज तक उनकी पैतृक सत्ता अक्षुण्ण बनी चली आ रही है। इस एकाधिकार मे वर्षों किसी तरह का अवरोध उत्पन्न नहीं हुआ—यह क्या कम है। अभी तक उनके निरंकुश और स्वेच्छाचारी अधिकार पूरी तरह सुरक्षित है। इसके अंतर्गत शोषण एव दमन की

एक ऐसी सुकठोर तथा सुदृढ परम्परा जीवित है, जिसको यू आसानी से ताड सकने का साहस किसी मे भी नही। इस अमानुषिक व्यवस्था के अधीन आदिमयुग की दासता अपरोक्ष रूप से पल रही है ।

कई दिनो तक हरनामसिंह अपनी भ्रमित बुद्धि लेकर चिंतन और तर्क की परिधि म एक तिनके के समान उडते रहे। अपने ही दायरे म खडे व्यक्ति की तरह वे मठ और फरज से घिरी मीमासा से लडने का दम भरते रहे लेकिन सब व्यर्थ ! कालातर म वे मीमासाये धीरे धीरे उन्हे घेरती चली गई। वे अनजाने से उसमे बुरी तरह फस गये। जब उन्ह होश आया तो पता चला कि वे जिंदगी के सही अर्थ से काफी कुछ विच्छिन्न हो गये हैं। गलत धारणाओ के पट उनकी आखो के आगे सदा के लिये उतार दिये है, ताकि वे भविष्य म कभी सही दिशा निर्देश लेकर कही चेतना लाभ न कर सकें।

यह नही सकते कि इस षडयन्त्र म उनके पिता का कितना हाथ था। परन्तु यह सच है कि इस वातावरण की सृष्टि म उनके पिता ने विशेष रुचि ली, इस आशा से कि लडके की बुद्धि पर तना भ्रम जाल आप से आप समय रहते नष्ट हो जाये ! सचमुच उन्होने निष्ठुर और पातक जैसा काम किया है। एक युवक की महत्वकाक्षाओ को उन्होने अपमानित ही नही उपेक्षित भी किया है उसके आदर्शों का मर्यादा हीन करके उच्छृखल बना दिया है। यही बात विशेषकर खेद और ग्लानि का कारण है।

जो भी हो पर इसकी वाछित और अनुकूल प्रतिक्रिया हुई। लगभग एक ही वर्ष मे इस नई पीढी के महत्वाकाक्षी युवक ने ठाकुर साहब के सुयोग्य पुत्र होने का गौरवशाली पद प्राप्त कर लिया। इस थोडी सी अवधि मे वे अब अपने पिता के पद चिह्नो पर निसकोच एव निर्भय बनकर चलने लगे। देखते-देखते सारे व्यवधान टूट गये। एक

समय ऐसा भी आया, जब अपने पिता के सम्पूर्ण आदर्शों, विचार तथा कार्यों का वे दृढ़ता-पूर्वक अनुसरण करने लगे।

छल, कपट और प्रवचना!

शराब, औरत और मदहोशी!

बस यही उनके जीवन के लक्ष्य है यही उनके आदर्श हैं। दया करुणा, ममता, परोपकार आदि सद्गुण फिजूल की बकवास हैं। इन पर चलना अब असम्भव है।

इस बीच प्रकृति का मोह आधुनिक सभ्यता का आकर्षण तथा समाज म क्रांतिकारी परिवर्तन करने की उत्कट आकांक्षा सभी कुछ अब नष्ट हो चुके है। आज वे स्वयं किसी स्वार्थ के वशीभूत हो सामाजिक कुरीतियों और नैतिक विकृतियों के जनक बन गये। उन्हें न तो अब किसी लोक लाज का भय है और न वे अब किसी अदृश्य सत्ता के प्रकोप से आतंकित है। वे समर्थ है—शक्तिशाली हैं। राह मे आने वाली सभी बाधाओं को ठोकर मार कर तोड़ने की वे अद्भुत क्षमता रखते है। यह सच्चाई दिन के प्रकाश के समान उनके अहंकारी नेत्रों म प्रकाशित है।

काफी देर तक हरनामसिंह अपनी अतीत की पुस्तक के सुनहरे पृष्ठ उलटते रहे। अपने जीवन का स्वर्ण युग! जब भूखे और प्यासे स्वर्ण मृग इधर उधर विचरण करते रहते हैं, फिर भी वे समय के तीर से बच निकलते हैं। उन्हें अक्सर भाग्यशाली कहा जाता है।

अपने आप कई विस्मरणीय और अविश्वसनीय घटनाएं अनायास स्मरण हो आईं। कुछ समय तक वे सुख तथा आनन्द के इस शांत सरोवर मे मुग्ध भाव से डुबकियां लेते रहे।

इससे पहले वे आगे कुछ और सोचें उन्हें अनुभव हुआ कि अब तक पवन-सी नस-नस में प्रवाहित हो गई है और रक्त के साथ पुनः मिलकर त्वरित गति से दौड़ने लगी है। अच्छा है वह इस तरफ से ध्यान हटा लें और निश्चित हो जाएं। इस तरह अतीत का याद करना भी क्या!—वह लौटकर आने वाला नहीं। निश्चय ही हवेली के इस सूने तथा वीरान जीवन में वह हर्षोल्लास का रस रंग भर नहीं सकता। आज के सदन में इसकी यही नियति है।

तभी उन्हें रनिवास में से ऊंची ऊंची आवाज सुनाई पड़ी। इस कर्कश कण्ठ की वाणी से मौन वातावरण का सन्नाटा एकदम भन-भना कर टूट गया।

वृद्ध ठाकुर साहब उद्विग्न से दिखाई दिए।

वे अच्छी तरह समझ गये कि यह प्रचंड आने की पूर्व सूचना है। स्पष्ट है कि बड़ी ठकुराइन छोटी से उलझ गई। एक झंझा जम दूसरे तूफान से टकरा गया। अब भूचाल आने में थोड़ा संदेह नहीं। सतर-गाम लावा उफनेगा, तब उसकी गर्म-गर्म धुआं उगलती जबदस्त ज्वालाओं में यह पूरी की पूरी हवेली आसानी से डूब जायेगी।

ठाकुर साहब में इतनी सामर्थ्य नहीं कि वे हाथ पकड़ कर उन्हें अलग अलग कर सकें।

'तेरा जी क्यों जलता है?' —तैश में आकर छोटी ठकुराइन बोली—'मैं तो यूं ही करूंगी सिंगार! अगर तू बुढ़िया होकर मरने चली तो फूटे तेरे भाग।'

"जले मेरी जूती। यहां तो खूब शृंगार करके मन की साध पूरी कर ली है।' —चोट खाई नागिन की तरह बड़ी ठकुराइन फुफ

कार उठी— 'सौत मेरी यह तो बता कि तू मटक छिनाल बनकर किसे रिझाने चली ?

दोनों ठकुराइन के कण्ठ स्वर उत्तेजना के कारण सहसा असुर एवं अभय हो गये। लगा जैसे वे दोनों यन्त्रवत् गाली गलौच करने की अनिवार्यता को निबाह रही हैं। रोष-आक्रोश से वे अब लड़ने के लिए बिल्कुल सन्नद्ध हैं।

जैसी कि सम्भावना थी पहल पहल निर्मम कण्ठों का वाग्युद्ध आरम्भ हुआ। ऐसे ऐसे अन्तर भेदी शब्दों के तीक्ष्ण बाण तरकस में से निकल कर बरसते हैं जिनसे बड़े बड़े साहसी और धैर्यवान भी अधीर हो जाते हैं। इस पर हरनामसिंह की कितनी बिसात ?

ठाकुर साहब अब अधिक देर तक अपनी अन्तर्क्षोभ को दबा कर नहीं रख सके। वे बूढ़े शेर की तरह दहाड़ उठे—"अरे, बन्द तो करो। तुम दोनों की अक्ल कहीं घास चरने चली गई है जो इस तरह लड़ कर मेरी सफेदी में धूल डाल रही हो। अरी भली ।'

मैंने तो इस को केवल वतन मलने को कहा था, पर इस पर उल्टा-सीधा जो मुँह में आया इसने बकना शुरू कर दिया। क्या ? छिनाल का कच्चा चबा जाऊँगी, अगर मेरी तरफ टेढ़ी नजर की तो ।

बड़ी ठकुराइन का प्रतिरोध पूर्ण मुद्रा अत्यंत विकराल है। इस का रूप साक्षात् मूर्ति।

अब छोटी ठकुराइन भी घायल शेरनी की तरह तड़प उठी। अविलम्ब ही भीतर का आवेग अधिक उग्र हो गया। इस समय उनका रौद्र रूप देखने के काबिल है।

इतने में, उसमें आश्चर्य-जनक परिवर्तन की झलक दिखाई दी—मानो क्रोध का वह भूत उसके ऊपर से उतर गया। उसके स्थान पर दुर्बलता की ग्लानि-जनक भावना प्रभुत्व पा गई। शीघ्र ही वह निरुपाय होकर टूटने लगी, अवश-सी होकर बिखरने लगी। एक भयानक प्रताड़ना की भावना उसके मस्तिष्क में विद्युत-लहर की तरह उभार गई।

जब गालियों से जी भर गया तो अचानक वह विकल-कण्ठ से रो पड़ी। अब उसका अन्तर्दाह आंसुओं के रूप में अनवरत बरसने लगा।

वह अब रुदन के साथ-साथ अनपढ़ स्त्री की तरह बेतहाशा बकने लगी, फिर होश ही नहीं रहा।

"अरे कलमुंहे सौतेले भाई का सत्यानाश हो, जिसने लोभ के कारण जीते जी मेरी अर्थी निकाल दी ।

स्पष्ट है कि छोटी ठकुराइन आपे में नहीं है, तभी तो अनर्गल प्रलाप कर रही है। बिना रुके कहनी अनकहनी कह जा रही है। हारकर हरनामसिंह ने कानों में उंगलियां डालकर नहीं सुनने का ढोंग किया, मगर इन कटूक्तियों के कारण उनका हृदय अपमान के दाह से जल उठा। असल में वे कितने अभागे हैं। अपनी असहायावस्था का यह बोध जिस तेजी से हुआ वे एकाएक सह न सके। परवशता भी कितनी बुरी चीज है, आज पहली बार उन्हें इसका गहरा अहसास हुआ।

किन्तु यह छोटी ठकुराइन ?

उसका अभिशप्त यौवन और सुलगती वासना ! काम तृप्ति के लिये बेचैन हृदय और स्नेह के प्रगाढ़ आलिंगन के प्रति आतुर मन ! स्वाभाविक है। शरीर का धर्म और उसकी भूख की सहज ही मे

उपेक्षा नही की जा सकती। जब एकात म विरह-व्याकुल प्राण भीतर ही भीतर छटपटाते हैं तो मानस दृष्टि स एक ही क्षण म भूत भविष्य वतमान अर्थात् त्रिभुवन—सृष्टि के समग्र चराचर एकदम माना अस्त हो जाते हैं। तब दुख सताप और दुस्वप्नो के आवग स सम्पूर्ण अन्तकरण कुहराच्छन्न हो जाता है। कही भी निरापद आश्रय नही—स्नेह के डैना पर—निश्चिनता के साथ चिता-रहित जीवन का जसे यह अभाव है।

कभी-कभी आत्म जुगुप्सा से अभिभूत हो वे गुस्से म अपने आप से पूछ बैठते हैं—"क्या इम वेगवान सरित प्रवाह का वे अपनी कमजोर बाहो म समेट लाये ? क्या जरूरत थी जा इस मचलती आधी को अपने आगोश म बाधने की कुचेष्टा कर बैठे ? किस लिये सिर फिर गया था जो जो ?

परन्तु आज अप्रासगिक रूप से उभर आये इन जलते प्रश्नो का उनके पास काई उपयुक्त उत्तर नही है। इसलिए अन्तस म व्यग से परिपूर्ण परिहास का स्वर ही हठात् ध्वनित हो जाता है। नये सिरे से विचार करने का अब अवसर नही रहा, इस विडम्बना की रहौर्न धूल म जसे सब कुछ खो गया -आत्म सम्मान के साथ साथ नैतिक साहस भी।

' अपने अह के परितोष के लिए अपनी शक्ति के मद मे चूर उन्हाने एक निर्दोष जीवन पूरी क्रूरता से बरबाद कर दिया। अपराधी हैं वे और ।'

अन्दर ही अन्दर वे मर्महत हो उठे। अस्थिर हो उनके होठ आहिस्ता-आहिस्ता बुदबुदाये—' तभी तो आज वह भयावह हिम शिला बनकर मुझे लगातार दबाती चली जा रही है ।"

इस बीच उनकी आखे पश्चात्ताप के दु ख से कातर हो गई ।

" आह ! काच के घरौंद म रहने का यह सपना बडी बेदर्दी मे जब टूटता है तो तो ।'

बस विराम ! सब कुछ जैसे मेद की खदक म बहुत गहरे तक डूब गया ।

बहुत रात तक हरनामसिंह जगे रहे । अब तक इस एकान्त मे, कुछ उनके भीतर से उठ कर घना होता हुआ व्यापता रहा । अथ हीन और लक्ष्य हीन चिताओ की एक अनन्त शृ खला, जिसके एक छोर पर उलझनें हैं तो दूसरे पर है अनुत्तरित प्रश्नो का भयानक जाल ! उसम फसने के पश्चात् मुक्ति की सहज म उम्मीद कर लेना बेकार है। इस कारण सुबह वे समय पर नही उठे । शायद आधी रात बीत जाने के तुरन्त बाद उनकी निष्प्रिय ढग से आखे लग गई । अब जागने पर भी वे पूण रूप से स्वस्थ नही हो पाय । देह भारी है, रह रह कर उसम कपकपी-सी होती है । मस्तिष्क विचार शून्य है और आखो मे है हल्की हल्की जलन !

बडी ठकुराइन उनके मलिन मुख को देखकर सहृदयता से कहन लगी– "आज तो बडी देर कर दी । तबीयत तो ठीक है न ?'

इसका उन्होने कोई जवाब नही दिया, वे मानो अपने म व्यस्त रहे ।

ठाकुर साहब ने बिमन से चाय का गिलास थामा, फिर चादी की डिबिया मे से उन्होने अफीम के छोटे-छोटे टुकडे निकाले और जल्दी मे मुह मे रख लिय । उनको दातो से चबा कर चाय के घूट के साथ वे इतमीनान से निगल गये ।

"क्या जी, यह भी कोई वक्त है उठन का ?" —ठकुराइन न तनिक झुंझला कर मीठा उलाहना दिया—'आज ठहरा त्योहार का दिन ।"

"त्योहार का दिन ? —ठाकुर साहब की विस्मित आखा म स अकस्मात् एक प्रश्न फूट पडा—' कौन सा त्योहार ?

"अरे वाह, आपको कुछ मालूम नही ।" —ठकुराइन अचरज व्यक्त करती है। ठहर कर बोली— आज अक्षय तृतीया है ।"

"अ च छा ।"

कुछ याद करते-करत ठाकुर हरनामसिंह बिल्कुल चुप हो गये। वसे किसी विषय को बहुत गहरे मे साचने की उनकी अपनी पुरानी आदत है।

अक्षय तृतीया यहा का सब प्रिय तथा सर्वोत्तम त्योहार है। इस दिन सारे क्षेत्र मे शादी-व्याह की धूम मच जाती है। विशेषकर 'गालवा' मनुहार बडे मैत्री भाव से की जाती है। चाहे अमीर हो, चाहे गरीब, सभी बडे चाव से इसका सेवन करते हैं। नये नये वस्त्र पहन कर खुशी से सभी लोग एक दूसर के घर द्वेष भाव को भूल कर परस्पर अभिवादन और स्नेह-पूण मिलन करने जाते हैं। इसके अलावा अगल वर्ष के लिए भले बुरे 'सगुन' लेने गाव के बड बूढे सीमा की ओर प्रस्थान करते हैं, जहा जानवरा और पक्षिया की आवाज, बहती चचल हवा सरिता का प्रवाहमय पानी, उदित होते सूय की किरणा तथा अन्य भौतिक उपकरणा से वे नये वष के भविष्य के सम्बन्ध मे सगुन' विचारते हैं। अच्छे 'सगुन से जहा उन्हें सुख एव सतोष मिलता है वहा बुरे 'सगुन' उन्हें चिंता म छोड जाते हैं। अक्सर सभी कुछ भाग्य की

वात यानी उक्ति कह कर वे मौन धारण कर लेते हैं।

खूब याद है हर्षोल्लास मे इस पावन पर्व पर ठाकुर साहब एक बहुत बडा दरबार लगाया करते थे। यह परम्परा सदियों से उनके जातीय-गौरव और कुल मर्यादा के सर्वथा अनुकूल थी। कहीं पर भी कमी नहीं—त्रुटि नहीं। 'मुजरा' और 'रम्मा' करने आने वालों के लिए 'गलवा' के अतिरिक्त भोजन की भी पूरी पूरी व्यवस्था थी। मोठ बाजरी का 'खीचडा' 'गुड राबडी' कढी का साग और खूब साग घी उस दिन भोजन की ये खास-खास चीजें होती हैं। वह सब लोग रुचि से खाते हैं। यद्यपि ये सब चीजें उन्हीं के द्वारा भेंट के रूप में ठाकुर साहब के पास रस्मी तौर पर पहले से पहुँच जाती हैं, मगर तो भी व उनकी महरबानी और एहसान के बोझ के नीचे दबे रहते हैं।

"पर आज तो कोई भी नहीं आ रहा है ।"

निराशा और उदासी से भरा भरा यह व्याकुल सा विचार, जो उनकी अतस चेतना को अब पूरी तरह झकझोर रहा है मन मे फिर उभर आया। यही नहीं, इसके कारण अपनी अधिकार शून्य सत्ता का तीखा बोध होता है। यह अन्दर ही अन्दर अव्यक्त दर्द-सा पैदा करता है।

" भूले भटके से अगर कोई आ भी गया तो मैं उसकी क्या मनुहार करूँगा ।"

इस प्रश्न के साथ उनके समस्त अन्तःकरण मे जैसे हर सारा अंधकार फैल गया।

" क्या करें? इस नई व्यवस्था ने थोड़े से अरसे मे हमारी पुश्तैनी जमीं जागीरें छीनकर हमें कहीं का न रखा ।"

क्षोभ और आक्रोश से भरे स्वर मे वे मन ही मन बडबडाये।

लेकिन धीरे धीरे कोसने की यह दुर्भावना-पूर्ण आवाज अनचाहे तीखी हो गई—"कुम्भीपाक नरक की यातनायें भोगेंगे वे महाजन, जिन्होंने कर्ज की अदायगी के नाम पर हमारे मुआवजे की सारी की सारी रकम हड़प ली ।"

हरनामसिंह के अन्तस में प्रचण्ड आंधी-सी उठ आई, उस पर नियन्त्रण रख पाना अब कठिन है। यद्यपि वह शीघ्र ही अपने लक्ष्य से भटक गई।

" और बची खुची राशि कुंवर ने ले ली। यह कहते हुए कि आप इसे शराब और अफीम में उड़ा देंगे। पुरानी आदत जो है और उस पर खुला दिल। फिर कसर किस बात की ? मुक्त हस्त हो खर्च करो। हुंह ! कल का छोकरा, हमें सीख देने आया है। शराब छोड़ दीजिये—अफीम की मात्रा कम कर दीजिये। जमाना बड़ा नाजुक है ! जैसे हम समझते ही नहीं। सारी ऊंच-नीच वही जानता है ।"

ठाकुर साहब का रुष्ट भाव अत्यन्त गहरा हो गया। असंतोष भीतरी है। उसमें मन की वह विषैली ग्रंथि खुलकर बिखर गई है।

' हमने तो उसे उचित शिक्षा देकर इस आशा से योग्य बनाया था कि वह बुढ़ापे में हमारा सहारा बनेगा। लेकिन यहां तो उल्टी गंगा बह गई। शायद उसका दिमाग फिर गया, तभी तो सलाह देता है कि इतनी सारी जमीनें रखकर क्या करेंगे ? बेच डालो यूं ही बंजर पड़ी हैं। कभी कहता है हवेली बनिये को समय रहते बेच दो। अच्छे पैसे मिल जायेंगे। कभी जेवरात को निकालने की रट लगाता है, कभी घोड़ों को बेचने की बात बड़ी बेरहमी से करता है। बस यही रट है उसकी। इन सब को अब तक रखने की क्या जरूरत है ?'

"नालायक कही का !" —हरनामसिंह अपने बेटे के प्रति एकदम जैसे हृदयहीन और कठोर हो गये—' बच डाल अपने माँ-बाप को । मूर्ख कही का ! ऊंचे खानदान की मान मर्यादा और अपने आत्म सम्मान का उसे कुछ भी ख्याल नही । कृतघ्न बेवकूफ !'

"हुजूर ! रामू घोडी के लिए और घास देने से साफ मना करता है ।"

यह कहते हुए हरनामसिंह का सेवक हीरा उनके सम्मुख अदब से आ खड़ा हुआ। आजकल के बुरे दिनो मे वही उनके पास एकमात्र विश्वास पात्र नौकर अब तक स्थायी रूप से टिका हुआ है। बेचारा बूढा जाये तो जाये भी कहा ? कौन है उसका आत्मीय जन इस ससार मे केवल ठाकुर साहब के अलावा।

ठाकुर साहब पहले से भरे बैठे थे, उबल पडे—' क्या कहा उस कमीने ने ?"

"जी, उसने कहा है कि हम नही देते और घास मुफ्त मे ।'

सेवक के मुह से यह सुनकर उन्हे ऐसा क्रोध आया कि अभी जाकर उस रामू के बच्चे को सरेआम जूतो से पीट डाले परन्तु परन्तु पर ?

परन्तु उनकी यह अधिकार शून्य निर्जीव सत्ता ? उसमे न पहले वाला ओज है न क्षमता है। उस पर स्वय को शक्तिशाली समझना एक भूल है। इस भ्रम को मन मे पालने से भी क्या लाभ ! सच, निरकुश शासक का वह मेरु-दण्ड कभी का टूट चुका है। फिर दम्भ किस बात का ? अत यह क्रोध अर्थ हीन है निस्सार है !

देखते देखते हरनामसिंह अपनी असंदिग्ध अपात्रता तथा सम्पूर्ण अयोग्यता के प्रति आत्म तिरस्कार से भर उठे। समय ने सब कुछ उलट कर रख दिया।

आज उन्हें बार बार वे सुनहरे दिन याद आते हैं, जब उनकी कीर्ति का सूर्य पूरे क्षितिज में बड़ी शान से चमक रहा था। कौन था उन्हें ललकारने वाला? कौन था उन्हें चुनौती देने वाला? सभी उनके आगे नत मस्तक थे—उनकी कृपा दृष्टि के अभिलाषी!

वे जब कभी अपनी घोड़ी पर सवार होकर गांव में सैर करने निकलते थे तो कायदे के मुताबिक सारे ग्रामवासी श्रद्धा और आदर से गर्दन झुकाकर उन्हें सलाम बजाते थे। किसी में हिम्मत नहीं जो उन्हें तिरछी नजरों से देख पाते। सब की नजर सरल, सीधी और नेक!

'खम्मा घणी!'

"घणी घणी खम्मा!"

पृथ्वीनाथ की जय हो।"

'कोटि-कोटि जुग राज करें।"

हुजूर का इकबाल बना रहे।"

इस जय जयकार को सुन कर ठाकुर साहब गर्व स्फीत से तन जाते। उनका सिर और ऊंचा हो जाता।

प्रत्येक वर्ष अपनी साल गिरह पर बधाइयें और शुभ कामनायें प्रकट करने वालों की हवेली में भीड़ लग जाती। हर्षोत्फुल्ल कोलाहल से वह तुरन्त गूंज उठती। बीच बीच में भेंट देने वालों का तांता लगा रहता।

उस वक्त प्रजा उन्हें अपार स्नेह और अटूट सम्मान से देखती थी। वे एक देवता के तुल्य पूजे जाते थे। उनका तिरस्कार और अपमान करना घोर पाप समझा जाता था, जिसका कोई प्रायश्चित्त नहीं होता।

इसके बावजूद भी उनका स्वभाव अत्यन्त कठोर और संवेदनहीन था। एक वर्ग तो ऐसा भी था, जिनकी लड़कियां तक दहेज में दी जाती थी। इतना बड़ा बलिदान स्वेच्छा से करना असम्भव लगता है। इस तरह का उदाहरण अन्यत्र कहीं पर भी मिलना दुर्लभ है।

दहेज में दी जाने वाली इन लड़कियों का सम्पूर्ण जीवन तो एक क्रीत-दासी से भी अधिक नारकीय यातनाओं से परिपूर्ण होता था। वे चाह कर भी कभी इन यन्त्रणाओं से सहज ही में मुक्ति पा नहीं सकती थी। मानसिक घुटन की परिधि में वे कैद रहकर हर पल—हर क्षण निरन्तर तड़पती रहती थी।

अक्सर छोटी-सी भूल अथवा साधारण-सी चूक पर उनको असह्य दण्ड दिये जाते थे। इनमें गुप्तांगों तक को दागने जैसे जघन्य अपराध भी शामिल है। इन अमानवीय अत्याचारों को झेल न पाने के कारण उन में से कई तो अकाल मृत्यु की गोद में सदा के लिए सो जाती थी। कुछ आंखें बचाकर उस लौह आवरण को फांद कर भाग जाती थी।

ठाकुर साहब का रोम रोम अचानक सिहर उठा। उन्हें जब स्मरण हो आईं उन अल्प-वयस्क लड़कियों की मार्मिक चीत्कारें, जिनके साथ हृदयहीन बनकर वे जबर्दस्ती वासनामय खिलवाड़ किया करते थे। उन कोमल अबोध बालाओं को फूल की तरह मसलने में उन्हें कितना आनंद आता था, इसे आज भी स्मृति में सजीव करके वे रोमांचित हो उठते हैं। उनकी बलिष्ठ भुजाओं में जब वे घायल हिरनी की तरह छटपटाती थी,

तब उन्हें कैसी तृप्ति मिलती थी। यह उस समय का उनका तपित दिल ही जानता है। जल बिन मछली की तरह उनकी तड़प देखकर वे बहुधा विद्रूप से हँस पड़ते थे। कैसी अमानुषिक भावनाओं से परिपूर्ण था उनका यह क्रूर खेल!

'हुजूर!' —चेहरे पर आत्मीय भाव लेकर उनके एकमात्र सेवक हीरा ने तनिक झिझकते हुए निवेदन किया—"आज आखा-तीज (अक्षय तृतीया) है इसलिए ।'

कहते-कहते वह सहसा रुक गया, मगर इससे हरनामसिंह के विचारों की कड़ी एक झटके के साथ टूट गई। एक टुकड़ा वहीं गिरा और दूसरा कहीं। वैसे उन्हें सामान्य होने में थोड़ा सा समय लगा।

क्या बात है?"

'हुजूर! आखा तीज ।"

अपने वाक्य को अधूरा छोड़कर वह नौकर हिं हिं करके एक खोखली हँसी हँस पड़ा।

ओह !"

क्षण भर में ठाकुर साहब समझ गये। वे उसके प्रति सदय हो उठे। हालांकि वे अच्छी तरह जानते हैं कि उनका यह सेवक पालतू कुत्ते की तरह वफादार है। स्वामी भक्त इतना कि आज तक इसने अपने कर्त्तव्य में तिल मात्र भी त्रुटि नहीं की। जब सभी नौकर धीरे धीरे उनकी विपन्नावस्था देख छोड़ कर चले गये, तब भी वह उनकी सेवा में पहले की तरह उपस्थित है। इस खस्ता हालत में भी उसे कोई शिकायत नहीं। रूखा सूखा जो भी मिल जाता है, उस पर सन्तोष है।

हरनामसिंह के होठों पर अनुकम्पा मिश्रित विश्वास की स्नेह पूर्ण मुस्कान फैल गई।

'ले आज मैं तेरी ही मनुहार करता हूं ।"

'खम्मा खम्मा ।"

ठाकुर साहब न अफीम के छोटे छोटे टुकड़े डिबिया म से निकाल कर अपनी हथेली पर रखे। हीरा ने कृतज्ञ भाव से उनम से दो बड़े टुकड़े उठा लिये। अब उसके चेहरे की चमक एक अलग तरह का अर्थ रखती है।

नौकर के चले जाने के बाद वे फिर अपने पिछले विचारों का सूत्र पकड़ने की कोशिश करने लगे।

और जान बूझ कर वे गरीब लड़कियां ऐसे मूढ़ लोगों के गले बांध दी जाती थी, जो थे बिल्कुल अकर्मण्य और आत्महीन पशु से भी गये गुजरे! ऐसे क्षुद्र जैसे मिट्टी के माधो। शराबी कबाबी चोर, उचक्के! बुराइयों के गर्त म आकण्ठ डूबे हुए। वे सद्-व्यवहार का मतलब भी नहीं जानते। अपनी पत्नियों को सताना उनका पहला काम था। बस, गाली-गलौच मार पीट और गृह निर्वासन के अतिरिक्त वे मानो कुछ भी नहीं समझते। इसका नतीजा यह निकलता कि वे फांसी का फंदा लगा कर या तालाब-नदी में डूब कर अपने इस घृणित जीवन का अन्त करने को विवश हो जाती। जैसे यही केवल एकमात्र विकल्प है।

उन जैसी औरतों और लड़कियों के 'त्याग' का एक ज्वलन्त प्रमाण और भी है, जो असंदिग्ध रूप से अश्रुत पूर्व है—कल्पना के विपरीत है। उसका पोषण केवल इस सामंती व्यवस्था के अंतर्गत होता था, जो अपने कठोर नियंत्रण के द्वारा उन बेसहारा और बेबस औरतों को सर्वस्व बलिदान करने के लिए आतंकित करती थी।

८

इधर ठाकुर साहब का निधन हो गया है, उधर ठकुराइन के साथ साथ उनकी तमाम दासियां शोक मनाने को मजबूर हैं। ये सुहागिने होने पर भी अपनी मालकिन के संग विधवा बन जाती हैं। उन्हें अनिच्छा और विवशता से विधवा वेश धारण करना पड़ता है। इस अमानुषिक प्रथा तथा कुरीति को वे आज भी स्वीकार करती आ रही है। व्यतिक्रम यदि किसी चीज का होता है तो वह बाहरी स्वरूप का नहीं। ये रस्मो रिवाज तो मानो अमर है—अनश्वर हैं। भला अपने देव तुल्य मालिक मालकिन के दुःख सुख में वे किस प्रकार निर्विकार और तटस्थ रह सकती है?

किसान!

गाय की तरह सीधे, मृग शावक की तरह निश्छल और निष्पाप। आकाश के समान स्वच्छ और निर्मल! क्या मन से—क्या हृदय से, सभी दृष्टियों से सरल और कपट रहित! झूठ, फरेब और विश्वासघात की भावना से अनभिज्ञ! कठोर परिश्रम करके अन्न उत्पादन की अद्भुत क्षमता अपने अन्दर छिपाये! वास्तव में अन्नदाता की कांति युक्त गरिमा अपनी अंतरात्मा में लिये सभी की भूख मिटाते हैं। फिर भी दरिद्रता, अशिक्षा, अभाव, असमानता आदि विषमताओं से वह पूरी तरह आक्रांत हैं—जर्जरित हैं।

हजारों वर्षों से यह क्रूर सामंती व्यवस्था उनका शोषण करती आ रही है। उन पर जुल्म करने में कौन सी कसर छोड़ी है? क्या नहीं किया है उनके साथ? झूठा या सच्चा रोब दिखा कर उन्हें खूब लूटते रहे। बिना सोचे-समझे बेबात मुकद्दमों में उन्हें फंसाते रहे ताकि वे सदा डरें और सहमे रहें। कर्जदार ऐसे बना देते, जिससे मौके-बमौके लगान या कर्ज वसूल करने के बहाने उनके घर, खेत और मवेशी तक नीलाम करवा देते। इस पर भी कहलाते थे करुणा निधान

और दया के अवतार !

कभी-कभी लगान न देने के अपराध म उनकी जो दुर्गति की जाती थी, आज भी उसे याद करके रोंगटे खड हो जाते है। उन्हे तिल तिल कर मारना तो मामूली बात है। प्रतिकार और प्रतिशोध इसके बदले मे ऐसा लेते कि देखने वाला के कलेजे तक काप उठते। खडी फसल और घर म आग लगाना तो साधारण-सा दण्ड है। इससे मन सतुष्ट नही होता तो उनकी बहू बेटियो को लाछित एव अपमानित करने मे जरा भी नही हिचकते। ऐसा था निष्ठुर व्यवहार फिर भी समझे जाते थे गरीबपरवर और दीनानाथ !

"अब सारे दिन बठे बैठे सोचते रहोगे या भोजन करने के इरादे स भी उठोगे ?"

पति के इन चिंतन के क्षणो मे अक्सर बडी ठकुराइन बाधा नही पहुँचाती, पर आज उन्हें अप्रत्याशित रूप से विचार मग्न देखा तो रहा नही गया। ऐसा भी क्या सोचना जो दीन दुनिया से बिल्कुल बेखबर हो जाय।

"हूँ !"

ठाकुर साहब जैसे एकदम सजग हो गये।

"भला त्यौहार के दिन भी इस तरह कोई गुमसुम और अनमना बठा रहता है।"

इसका उन्होंने कोई उत्तर नही दिया। उन्हे अपनी इस अशात मनोदशा से मुक्त होने म कुछ समय लगा, तो भी पूरी तरह वे अपनी अस्थिरता दबा न सके। धीरे धीरे व इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि ये विचार जो अतीत के उत्थान और पतन की ओर सकेत करते है आज के परिवेश म अनावश्यक हैं—निराधार हैं। बीते हुए कल को आज याद करने से वह पुन लौटकर आने वाला नही। फिर ? यू इस

मन को कौन समझाये, जो अपने टूटे विश्वासा तथा क्षय ग्रस्त आस्थाओ का खण्डहर भर रह गया है। इसम आशा-आकाक्षा का नवीन जीवन प्रतिष्ठित नही होता। किसी अनाम बाझ से लदे विकृत और कुरूप चेहरा के दशन बड भौंडे ढग से होते है।

'कुछ भी हा भीतर उठने वाले इस बवण्डर को किसी न किसी तरह रोकना होगा, वरना ।'

इस निश्चय के साथ वे फौरन उठ गय, ठकुराइन का दोबारा अनुरोध करने का उन्हान कोई अवसर नही दिया।

हरनामसिंह जब भोजन कर चुके तो हाथ मुह धाकर फिर मसनद पर आकर लेट गये। बडी ठकुराइन ने अच्छी तरह देख लिया कि भोजन की तृप्ति स वे श्लथ हैं। उचित अवसर देखकर उन्होने अपनी मन की गाठ खोली।

जब कुवर कहता है फिर घोडी वेच क्या नही दते ?'

सुनकर ठाकुर साहब सहसा स्तब्ध रह गये। इस वक्त यह सवाल कहा से आ गया ? धक्का लगे व्यक्ति की तरह तनिक सम्हल कर वे स्थिर दृष्टि से तुरन्त बाले— 'यह कतई सम्भव नही है ।"

ठकुराइन भली भाति जानती है कि इसका तीव्र विरोध हागा। वैस भी बड दुख से अपनी प्रिय वस्तु को वेचन की बात सोची जा सकती है।

इधर इस प्रश्न को लेकर हरनामसिंह एकदम उत्तेजित हो जाते हैं। उन्हें लगता है कि जिस निस्वार्थ प्रेम भावना पर उन्होने इन दिनो ममत्व की नींव रखी है, वही एक धक्के से ध्वस होने जा रही है। तब एक खण्डहर शेष रह जायेगा—उनकी यह आशका है। घोडी के प्रश्न पर व एक प्रकार से सवेदनशील बनकर भावुकता से सोचते हैं।

ठकुराइन के लिए यह विचार या भावना ही सबसे बड़ी बाधा है, जिसका वे अभी तक उल्लघन नही कर सकी है चाहे –अनचाहे। चिंता का यही तो कारण है। अब क्या करना चाहिए, समझ मे नही आता ?

थोड़ी देर बाद वे शाति पूर्वक कहने लगी—' जरा ठण्डे दिमाग से सोचिये ।"

"सोच लिया।" ठाकुर साहब तुरन्त आवेश मे आ गये—"जिस घोड़ी को बड़े स्नेह से पाला है—उस पर सवारी करके खूब शौक पूरा किया है अब क्या कमजोर और बूढ़ी होने पर उसे तांगे मे जोतने के लिए 'कसाइयो' के हाथ बेच डालू ? यह मुझसे हरगिज नही होगा ।'

ठाकुर साहब की कठोर वाणी सुनकर एक बार तो ठकुराइन भी विचलित हो गई। किंतु उनकी भी अपनी मजबूरी है। वे हृदय की ममता का गला घोट रही है। केवल भावनाओ मे बहने से काम थोड़ा ही चलता है।

"वो सब ठीक है, मगर सवाल है खर्चे का।' —एक कुशल गृहिणी के समान वे सजीदगी से बोली— 'आमदनी तो है नही और कुवर खर्चा भेजता नही। अब काम कैसे चले ?'

"जैसा अब तक चलता आया है।" —ठाकुर साहब ने अपना पुराना निरर्थक राग फिर खीझ कर अलापा—"भगवान पर भरोसा रखो, वही बेड़ा पार करेगा ।'

इस फिजूल के विश्वास से ठकुराइन एकाएक चिढ गई।

"भगवान भगवान भगवान हुम् !' —न चाहते हुए भी उनका कण्ठ स्वर प्रखर हो गया— 'क्या वह आपका निकट का सबधी है जो इस मुसीबत के वक्त टोकरी भर कर रुपये भेज देगा ?"

हरनामसिंह अब चुप और निश्चल। हारकर तत्क्षण ही नैराश्य भाव से बोले—"फिर जैसी तुम्हारी इच्छा है वैसा ही करो। मुझे कोई आपत्ति नहीं ।"

ठकुराइन के तर्क से परास्त होकर वे रह तो गये, पर उनके भीतर लगातार कुछ घुटता रहा। वे चाहने पर भी उसे किसी तरह की आवाज न दे सके।

तत्काल ही ठकुराइन ने नौकर को बुलाकर आदेश दे डाला।

बूढ़ा सेवक हीरा सब समझता है। इसी हवेली के टुकड़ों पर पल कर उसने यह सफेदी ओढ़ी है। एक समय इसने हवेली की समृद्धि देखी है—उसका ऐश्वर्य देखा है। लेकिन अब वह सब कुछ काल के अंधेरे गर्भ में समा कर नष्ट हो गया है। वैभव की वह नाव दरिया की ऊंची लहरों में कभी की खो गई। श्री-सम्पन्नता का वह तेजस्वी सूर्य अब पूरी तरह अस्त हो गया। चारों तरफ मानो अंधकार ही अंधकार जिसमें बीता हुआ अतीत केवल मोहाच्छन्न के सदृश लगता है। कहते हैं कि समय बड़ा बलवान है। पल में निर्माण—पल में ध्वंस!

तभी हीरा की आंखें भर आईं।

जब वह घोड़ी को हवेली के बाहर ले जाने को तैयार हुआ तो हरनामसिंह अपना भावावेश रोक न सके। उन्हें लगा कि जैसे उनका प्रिय हितैषी और स्वजन उनसे सदा के लिए बिछुड़ रहा है। उसके ही सामने अपने हृदय के अनुराग की शून्यता एक बड़ी सी निराशा के रूप में मानो प्रत्यक्ष हो गई! बस वे अधिक देर बैठे न रह सके, लगभग दौड़ कर वे घोड़ी के गले से लिपट गये। उनकी आंखें अपने आप कातर भाव से छलछला आईं।

घोड़ी की उदास आंखें और दयनीय दृष्टि उनके मन में टीस

सी पैदा करती है। अत वे व्याकुल कण्ठ से कहे बगैर नही रह सके—"हीरा ! तू मेरी घोडी को मत बेच। मत बेच हीरा ! मैं इसके बिना रह नही सकूंगा सच हीरा ! इसके बदले मे ।"

करुणा का यह स्वर दूर खडी ठकुराइन के दिल को भी स्पर्श कर गया। पति को गहरी ठेस पहुँचा कर वह कैसे चैन की सास लेगी। उन्ही के पीछे तो ये थोडा बहुत सुख एव सतोष बाकी है। पति का मुह देखकर ही वे इन दुर्दिनो मे कुछ राहत महसूस करती है।

"हीरा ! मेरी घोडी मत बेच मत बेच हीरा ।'

ठाकुर साहब अब पहले से अधिक क्षुब्ध हैं अशात हैं।

ठकुराइन सह न सकी। वे अधीर होकर बोली—'रहने दे हीरा ! घोडी वापिस बाध दे और ।"

लगता है स्वर बीच ही मे टूट गया। शीघ्रता म उन्होने मुह फेर लिया और फुर्ती से पैर उठाती हुई अपने कमरे की तरफ चल पडी। अन्दर जाकर वे भारी मन और खिन्न हृदय से अपना गहनो का बक्सा खोलने लगी।

पल भर मे ही उनकी व्यथातुर दृष्टि धुधली हो गई।

•

निशाचर

•

•

सहसा सीढियो पर ही पैर ठिठक गये। जीन के मुडते हुए कोने पर डरी-सहमी महिला पर दृष्टि जम गई। उसमे एक प्रश्न है—तीव्र जिज्ञासा है।

अभी अभी वे दोना बहुत ही हर्षोल्लास म निमग्न मन लेकर बाहर से लौटे है। अपने आनन्दी परिवेश म गुनगुनाती हुई महिला ने बड रूम की तरफ पैर बढाने चाहे। दुबली पतली होने के बावजूद भी उसका शरीर वसे अविवाहिता की तरह गठा हुआ स्वस्थ है। उसमें युवावस्था की मनोहर गरिमा है। लावण्य जैसे चेहरे पर आकर थम गया है मगर उसकी चचलता अभी तक गति हीन नही हुई—यह स्पष्ट है। मुह से जब निर्झर के समान उन्मुक्त हसी फूटती है तो सम्पूर्ण

वातावरण मानो बेसुध होने लगता है।

एक ओर खड़े पुरुष के होंठों पर स्मित हास्य की हृदयग्राही रेखाएं आ-आकर घड़ी भर में विलीन हो जाती है तब उसका एक अर्थ है कि खूब हंसो और आकण्ठ डूबकर प्यार करो।

जाने की इच्छा से ज्योंही पुरुष ने पीठ घुमाई तो महिला उसके पार्श्व में कंधे से सटकर खड़ी हो गई। उसने सप्रश्न दृष्टि से कहा—"अरे, अभी से चल दिये ?'

'हां, जरा जल्दी में हूं।" —पुरुष ने बड़े ठण्डे भाव से उत्तर दिया।

"क्या ?'

इसके तुरन्त बाद महिला वैसे ही हंस पड़ी। उसकी दन्त पंक्ति कितनी साफ और चमकीली है। अपने रसीले अधरों में हंसी समेट कर वह फिर पूछ उठी—'क्यों, नाराज हो गए ?'

नहीं तो।'

अब अधिक सफाई देना पुरुष ने अनावश्यक समझा। वह खिड़की के परदे की तरफ निर्निमेष ताकता हुआ निःशब्द खड़ा रहा।

महिला की बहकी बहकी निगाहें उसके चेहरे पर एक बार स्थिर हो गई। लगभग अप्रासंगिक रूप से उसने एक अलग किस्म का प्रश्न किया—"कुछ और लोगे ?'

शायद पुरुष भली प्रकार समझ गया। उसने अविचलित स्वर में जवाब दिया नकारात्मक ढंग से—"नहीं, इच्छा नहीं है।"

वह इस दफा ऐसे बोला जैसे भीतर से कोई शब्द

जबरदस्ती बाहर धकेल रहा है। तनाव की एक रेखा तभी उसके मा‍ पर उभर आई। लगा जैसे वह इस व्यय के प्रश्नोत्तर से लगभग ऊ गया है।

उसने नीचे उतरने के लिए अपना एक पाव ज्योंही बढाय तो महिला कुछ याद करके अनायास बोली—"अरे, आज ऐसे ही च जा रहे हो ?"

कहते-कहते महिला ने अपना सामने वाला कपोल उसकी तरः सहज भाव से बढा दिया। पुरुष ने निर्लिप्त और अनासक्त भाव र अपने सूखे होठ यत्रवत् उस पर टिका दिये। महिला की चूडिया खन खनाती हुई बाहे उसके गले मे आ लिपटी। चुम्बन चिपका कर वह हडबडा कर तेजी से सीढियाँ उतरने लगा। निर्मम बनकर पहले उसे कलाइया का झटकना पडा, इस पर भी महिला उसकी उपेक्षा पर खिलखिलाती रही। कदाचित् चुम्बन का माधुर्य अन्तर स्रोत को कहीं गहरे तक रस सिक्त कर गया है।

'अच्छा गुड नाइट ! फिर कल मिलेंगे।"

हसी के बीच वह बड प्यार से बोली और मस्ती म अपने पूरे बदन को हिलाती हुई मुड गई। लेकिन तभी अनचाहे उसकी नजर लकडी की सीढियो के नीचे फर्श पर अटक गइ। पल के शताश में ही उसके चेहरे का रग एकदम उड गया। उस पर अप्रत्याशित भय तथा आकस्मिक आतक की काली छाया आकर ठहर गई।

इसी समय अर्द्ध-रात्रि के सन्नाटे को चीरकर एक लम्बी चीख हठात् मुह से निकल पडी। विकल कण्ठ की यह हृदय विदारक चीख जो पथरीली दीवारो के मौन को भेदकर उसम दारुण दुःख की पीडा भर देती है।

तीगे दर की सनसनाती हुई इस अन्तर भेदी चीख ने तुरन्त अपना असर दिखाया। सीढियें उतरते हुए पुरुष के पाव अकस्मात् जहा के तहा रुक गये। उसकी आखो में थर-थर कापती और भय से पीली पड़ गई आकृति अचानक चुभ गई। वह अब निर्विकार न रह सका। भ्रमित बुद्धि से सहज ही में प्रश्न आया—'क्या हुआ ?'

इसके पश्चात् किसी अमूर्त और आकार-हीन सन्देह से दशित उसका मन वापिस ऊपर जाने के लिए व्यग्र हो उठा। इसी उत्तेजना में वह उतावली से ऊपर सीढ़ियें चढने लगा। बिना रुके धडल्ले से !

"क्या है ?"

वहा पहुचने से पहले तथा पूरी स्थिति को समझे बिना ही उसने घबराई हुई आवाज मे तुरन्त प्रश्न कर डाला।

किन्तु वहा पहुचने पर भी कोई उत्तर नहीं मिला। न जाने कैसा लाचारी से भरा व्यतिक्रम है। मानो कण्ठ में कोई गोला सा अटका हुआ है।

कुछ देर में महिला को थोडा सा होश आया। अपनी उमड आई रुलाई के आवेग को रोक कर उसने नीचे फर्श की ओर उगली का इशारा किया, फिर डूबती हुई आवाज में बोली—'वो वो देखो। पता नहीं कब बबी सीढ़ियो से लुढक कर नीचे नीचे गिर पडी है।

"क्या कहा ?'

पुरुष के मुह से भी घबराहट में अस्पष्ट-सी चीख अपने आप फूट पडी। यह घटना इतनी आकस्मिक और कल्पना के विपरीत है जिस पर सहज ही विश्वास नहीं होता।

"कहा ? किधर ? किस तरफ ?"

अब महिला अपना धीरज खो बैठी। इसका परिणाम यह रहा कि जो मुंह उसने अब तक रुलाई को रोकने के प्रयास में जबरदस्ती कस कर बन्द रखा था, उसमें वह अब कामयाब नहीं हो सकी। संयम का मानो बांध टूट गया। एक करुण सिसकी के साथ उसने अपनी दोनों हथेलियों से मुंह ढांप लिया।

ओह! यह यह क्या हो गया?"

दर्द में डूबे इस स्वर के साथ महिला का क्रन्दन काफी तेज हो गया। इस बीच उसकी टांगों में इस कदर कम्पन होने लगा, जिससे नीचे उतरने का हौसला भी बिल्कुल जाता रहा।

कुछ कुछ परिस्थिति की गम्भीरता को समझते हुए पुरुष भी उल्टे पांवों पलट गया। शीघ्रता और उतावली में वह एक साथ तीन तीन सीढ़ियें तक बहिचक लांघ गया। कुछ ही पलों में नीचे पहुँचकर उसने दम लिया।

'उफ!'

सचमुच वहां का दृश्य बहुत ही भयानक और त्रास पूर्ण है। छोटी बच्ची फर्श पर अचेत पड़ी है। उसका नन्हा-सा सिर कच्चे नारियल की तरह फट गया है। चमकीले काले केश रक्त में सने हैं। उसके छोटे छोटे हाथों और पांवों पर चोट के निशान हैं। निर्जीव पड़ा शरीर पूरी तरह लहू लुहान है। शायद काफी ऊपर से यह बालिका सीढ़ियों पर लुढ़कती हुई नीचे गिरी होगी, जिसकी वजह से यह रक्त रंजित दुर्घटना हो गई है।

'आह!"

इस थरथराती हुई—कलेजे को चीर देने वाली—आवाज के साथ पुरुष ने अपना माथा पकड़ लिया। लेकिन उसकी आंखें अभी तक फर्श

पर जमे गाढे और ठण्डे लहू पर केन्द्रित हैं, जो सवनाश की अग्रिम सूचना अपनी मूक और दर्दीली वाणी मे चुपके से द रहा है।

× × ×

"शुक्र है, जो आज की रात कोई भी सीरियस केस अब तक नही आया।" —डाक्टर वर्मा कजुअल्टी वार्ड की डेस्क पर बैठे सामने खडी नर्स को बहुत ही इतमीनान से कह रहे हैं।

"यस सर !"

जब कोई काम नही होता और साथ ही नीद के मारे आखे झपकाने की भी आशा न हो तो कितना दुस्वार हो जाता है एक लम्बा खाली समय काटना ! एक स्वस्थ व्यक्ति अकारण बैठे-बठे कर भी क्या ? निष्क्रिय ढग से उबासी पर उबासी लेना बेकार म अपने चारो ओर सुस्ती फलाने जसा है जो किसी भी तरह सहनीय नही। कभी उसे घर की याद सताती है और कभी अपने काम के सम्बन्ध में निरथक चिंता होने लगती है।

ऐसे खाली वक्त म पलके बन्द किये निश्चेष्ट भाव से शिथिल पड रहना प्राय अच्छा लगता है। किसी भी तरह के भले-बुरे विचारो से मुक्त प्रत्यक्ष मुद्रा म निश्चितता एव बफिक्री का एहसास होता है। तब इस जाग्रत अवस्था म कई बार मधुर स्वप्न भी देखे जा सकते हैं। उनमे से कुछ तो मीठी गध बखेरते है जो दिल को छू जाय ! कुछ ऐसे करुण भी होते हैं जिनसे बज्र भी पिघल जाय !

कई एक ऐसी न भूलने वाली घटना या अनुभूति की स्मृति जगत म ताजा हो जाती है, जो स्थायी रूप से उसमे बस गई है। उसे मन्द-मन्द मुस्कान के साथ स्मरण किया जा सकता है। निश्चय ही उसका आनन्द निराला अ र हृदयग्राही है।

बेचारी नर्स अपनी उनींदी आंखों को जबरदस्ती खोल कर डाक्टर की बातों पर यूं ही गर्दन हिलाती हुई धीमे कण्ठ से कहती है—"यस सर, यस सर, यस सर।"

अनिद्रा के कारण उसका भी बुरा हाल है। सिर भारी है और उसमें सुन्न सी छा गई है। विडम्बना तो यह है कि वह न तो किसी सुखद एवं मधुर कल्पना में डूब सकती है और न ही आराम से नींद की मीठी मीठी झपकियें ले सकती है। लगभग दो-तीन बार वह नल के नीचे जाकर अपनी बोझिल पलकों पर पानी के छींटे लगा चुकी है फिर भी सामान्य नहीं हो पाई।

नाइट ड्यूटी में अक्सर ऐसा ही होता है। आधी या पूरी रात जाग जाग कर वे दोनों अपने कर्त्तव्य के प्रति निष्ठावान एवं सतर्क रहते हैं। इतनी रात के जागरण में निद्रा और जागृति की सीमा पर वे जैसे अवश से हो लड़खड़ाने लगते हैं।

इसी समय अचानक बाहर से किसी पुरुष की व्यग्र आवाज कानों में पड़ी—"डाक्टर डाक्टर!"

डाक्टर वर्मा और नर्स दोनों एक साथ चौंके। क्षण भर में ही चौकन्ने और सावधान हो गये। डाक्टर ने डेस्क पर से सिर ऊंचा उठाया और जल्दी में उठ कर द्वार तक आये। पीछे पीछे नर्स भी चली आई।

कोई भद्र पुरुष हैं जिन्हें पहचानने में डाक्टर वर्मा को कोई देर नहीं लगी। परिचित हैं इसलिये चकित रह कर बोले—"आप हैं मिस्टर सोलंकी।"

"जी मैं ही हूं।"

"आइये, अन्दर आइये।"

कहते हुए डाक्टर एकदम घूम गये। अपने कर्त्तव्य के प्रति सचेत डाक्टर तत्काल बोले—"कहिये, क्या बात है ?"

"एक छोटी बच्ची को साथ लेकर आया हूं। उसके सिर पर चोट लगी है। क्या आप इस वक्त उसे देख लेंगे ?"

थके हुए और परेशान नजर आने वाले मिस्टर सोलकी के स्वर में अनुनय का भाव किसी भी तरह छिप न सका।

"क्यों नहीं।" —वर्मा ने बिल्कुल निर्विकार कण्ठ से कहा, पर कुछ पल ठहर कर वे जिज्ञासा-वश पूछ बैठे—"कैसे हुआ ?"

"सीढ़ियों से गिर पड़ी।"

"सीढ़ियों से ?"

लगा कि जैसे मिस्टर सोलंकी डाक्टर के इस प्रश्न से बहुत कुछ स्वयं को आश्वस्त अनुभव करते हैं। यह एक सामान्य प्रश्न है। कुछ डाक्टर तो ऐसे समय में पहले-पहल इस तरह की दुर्घटना को सदिग्ध दृष्टि से देखते हैं। फिर प्रश्न पर प्रश्न करते जाते हैं, जिनका उत्तर देना भी कठिन-सा लगता है। उनकी संशयात्मक निगाह तो नश्तर की तरह तेज होती हैं, मानो अभी क्षण भर में अन्तर परतों को चीर डालेंगी। इससे भीतर कहीं अनचाहे असन्तुलन सा आ जाता है। तब हृदय में अनावश्यक भय और बेचैनी की काली घटा घिर आती है। यह सब कितना असगत लगता है।

सोलंकी फिर द्वार तक लौट कर गये और कुछ ऊंचे स्वर में बोले—"जरा बेबी को इधर ले आओ।"

जिस तरफ सिर घुमाते हुये उसने आवाज लगाई थी, उधर डाक्टर वर्मा और नर्स दोनों खामोशी से देखने लगे।

थोड़ी ही देर में एक महिला अचेत बच्ची को दोनों हाथों में

उठाये द्वार के निकट आ पहुँची।

इस कुतूहल और उत्सुकता की घड़ी में डाक्टर वर्मा ने स्पष्ट देखा कि यत्रणा कातर चेहरा लटकाये उनके सामने जो भद्र महिला खड़ी हैं, उसे किसी भी तरह असुन्दर और रूप-हीन नहीं कह सकते। स्वास्थ्य की उज्ज्वल आभा से प्रदीप्त आखो मे अभिजात वर्गीय दर्प प्रत्यक्ष झलक रहा है—यद्यपि वे इस समय पीड़ा-युक्त और शोकाच्छन्न है। उनके घनेरे घुघराले बाल अमावस्या की तिमिराच्छन्न रात्रि के समान काले और चमकीले है। वे किसी भी दृष्टि से एक भावुक या रसिक पुरुष के लिये स्वप्नमयी प्रेमिका से कुछ कम नहीं हैं। उनके अगो की मादक गध से वह अपने आपको उन्मत्त महसूस कर सकता है। निश्चय ही उनके पासग म प्रेम और साहचर्य का सुख स्वाभाविक रूप से मिल सकता है।

"डाक्टर साहब! जरा जल्दी कीजिये।"

तत्क्षण ही महिला की रोनी सूरत और भी विकार ग्रस्त हो गई।

'अन्दर ले आइये।"

इतना कह कर डाक्टर वर्मा परीक्षण-कक्ष की तरफ रवाना हो गये।

मिस्टर सोलकी और वह महिला बच्ची को लिये बड़ी तेजी से उनके पीछे पीछे चल पड़े।

इस बार भद्र महिला बड़ी अकुलाहट से आगे बढ कर बच्ची को बड पर लिटाने आई तो उनके मुह से निकल कर शराब की तीखी गध का झोका डाक्टर वर्मा के नथुनो से बहुत ही अनपेक्षित ढग से जा टकराया। देखते-ही देखते उनके समस्त मुख मण्डल पर आक्रोश और घृणा की मिली-जुली भावना उभर आई। जो कुछ भी सद्भावना

और सहानुभूति इस बीच उत्पन्न हो गई थी, वह तत्काल आप से-आप नष्ट हो गई। मात्र औपचारिकता रह गई, इस पर भी व कुछ नहीं बोले।

अपने आन्तरिक विक्षोभ को दबा कर उन्होंने रोगी का परीक्षण आरम्भ किया। व सहसा गम्भीर हो गये। नर्स को कोई आवश्यक इजेक्शन लगाने का उन्होंने शीघ्र ही आदेश दे डाला। तब लगातार अपरिहार्य ढग से आक्सीजन देने की भी उन्होंने हिदायत कर दी।

इस पर नर्स बिना विलम्ब किये ही एकदम सक्रिय हो गई। उसके काय करने की क्षमता आश्चर्य जनक ही नहीं अद्भुत है।

"डाक्टर! मेरी बच्ची ठीक तो हो जायगी न?" — महिला ने बहुत ही बतावी और बेसब्री से पूछ लिया।

वर्मा न कठोर दृष्टि से उसे ताका। एक बार तो मन में आया कि कोई कड़वी या तीखी बात कह दे, पर चाह कर भी वे एक शब्द भी नहीं बोले।

"बोलिये डाक्टर!"

आशंका और भय से त्रस्त तेज होती दिल की धड़कन भीतर से संयत होने नहीं देती। महिला तो सन्तोष-जनक उत्तर चाहती है जिससे तसल्ली हो। सूजी आखो मे जाने कसा सन्देह का कोहरा भर गया है। बार बार अधर पल्लव काप-काप जाते हैं। आसुओं में भय के जो कण तैर रहे हैं वे रुलाई के आवेग को रोक पाने मे बिल्कुल असमर्थ है।

डाक्टर ने बड़ी मुश्किल से मुह खोला—"मैडम, मैं अपनी तरफ़ से पूरी कोशिश करूंगा। वैसे हैड इजरी है। बगैर एक्स रे के कुछ

भी कहना सम्भव नही।"

' क्या ?"

भद्र महिला के मुह से अचानक करुण सिसकी फूट पडी। वे एक कोने म सिमट कर दु खी मन से सुबकने लगी।

डाक्टर वर्मा ने दया-हीन और निष्करुण बन कर उनको एक बार फिर उपेक्षा से निहारा, तब आहिस्ता-आहिस्ता परीक्षण-कक्ष से वे बाहर निकल गये। फुर्ती से उनके पीछे मिस्टर सोलकी भी चले आये।

"आप जरा अपनी पत्नी को समझाइये कि इस वक्त होस्पिटल म रोना ठीक नही।'

भद्र पुरुष तनिक झिझके, तत्पश्चात् उनका सिर लज्जा से झुक गया। धीरे से कहने लगे—"डाक्टर! ये मेरी पत्नी नही है ।"

"क्या ?"

वर्मा बिल्कुल ऐसे चौके जसे वही सोते म अप्रत्याशित धक्का लग गया हो। प्रश्न वाचक भगिमा अब कुछ शिथिल हो गई। वे होठो ही होठो म बडबडाये—' आई सी ।"

रहस्य पर रहस्य! इस बीच उन्होंने मिस्टर सोलकी के मुह से भी वैसी ही शराब की तीखी गध भली भाति महसूस की।

'डाक्टर वर्मा! आप जल्द से जल्द बच्ची का एक्स रे कर लें और उसका और उसका ।"

सोलकी का स्वर घबराहट के मारे बीच म अवरुद्ध हो गया। वह जरूरत से ज्यादा अधीर हैं—अशात हैं।

"जल्दी मे कुछ नही होगा सोलकी !" —डाक्टर की आवाज अकस्मात् खिंच गई। वे तन कर फिर बोले— "बडा ही सीरियस केस है। पहले मुझे ज्यूरिष्ट की रिपोर्ट तैयार करनी होगी, फिर इस दुघटना की सूचना पुलिस को भी देनी जरूरी है।"

भय और दुश्चिन्ता की एक सनसनाती हुई लहर मिस्टर सोलकी के अन्तःकरण मे दौड गई। उन्होने गले का थूक निगलते हुये हक्ला कर कहना चाहा—"पुलिस को आप बीच म क्यो घसीटते हैं ?"

डाक्टर की निमम दृष्टि एक प्रहार के समान उनके खिन्न मुख पर पडी। वे अविचलित कण्ठ से बोले—"यह जरूरी है। हालांकि मैं खूब जानता हू कि आप शहर के मशहूर ठेकेदार हैं। बडे प्रभावशाली और दबदबे वाले व्यक्ति ! लेकिन मेरा भी तो कुछ फज है। अगर कल कुछ हो हवा गया तो उसका जिम्मेवार कौन होगा ?'

'डाक्टर डाक्टर ! प्लीज हल्प मी हेल्प अस प्लीज !'
—भद्र पुरुष करुण स्वर मे फौरन गिडगिडाये।

इसका वर्मा न कोई उत्तर नही दिया। उनकी चुप्पी इस बोझिल वातावरण मे अधिक सदिग्ध हो उठी। मिस्टर सोलकी को लगा कि मानो किसी के अदृश्य हाथ आगे बढ कर अपनी लोहे जसी कडी उगलियो से उनकी गदन को कस रहे हैं। घुटन की वजह से गले से आवाज तक नही फूटती। अब उनको सवनाश स्पष्ट रूप से दिखाई दने लगा। चिंता शीर्ण मुख मण्डल कुछ ही पलो मे पीत वर्ण हो गया।

एक प्रकार का असन्तुलित भाव लिये वे आद्र-कण्ठ से बोले—
"इस मुसीबत म आप ही बचा सकते हैं डाक्टर वर्मा।"

डाक्टर न कुछ कहने की कोई तात्कालिक आवश्यकता अनुभव

नही की। वे पूर्ववत् पाषाण-खण्ड के समान मौन एवं निश्चल खड़े रहे।

भविष्य में होने वाली दुर्गति से आशंकित हो सोलंकी का भीरु मन जैसे अपने आप डूबने लगा। वे चाह कर भी धीरज नहीं रख सके। एक अनावश्यक अन्तर्द्वंद्व में फंसे व्यक्ति की तरह संतप्त हृदय लेकर वे आवेश में न कहने वाली बातें भी उगल गये।

'डाक्टर! हम लोग बच्ची को आया के भरोसे छोड़ कर एक बर्थ डे पार्टी अटेंड करने गये थे। बच्ची के डैडी कहीं दूर पर बाहर हैं, इसलिये मिसेज मेहरा मेरे साथ गईं। जब रात को वापस लौटे तो दुर्भाग्य से यह घटना पहले ही घट चुकी थी। बताओ, क्या करें?''

डाक्टर ने पलट कर इस बार कोने में अवसाद में डूबी वेदना की साकार मूर्ति—मिसेज मेहरा को जरा गौर से देखा। उनके होंठों की गुलाबी लिपिस्टिक अब तक फीकी पड़ चुकी है। दोनों गालों की आभा इस दुःख की घड़ी में मलिन हो गई है और आंखें हैं निस्तेज!

वे टकटकी लगा कर पैनी दृष्टि से इस तरह ताकने लगे जिससे वे यह ठीक ठीक मालूम कर सकें कि मिसेज मेहरा के अधर और कपोल सद्य चुम्बित हैं या नहीं! इस संबंध में उनके मन में एक अनोखा और निराला कौतुक जाग्रत हो गया।

तब भी उनका ध्यान उधर मिसेज मेहरा की सिसकती आंखों पर ही केंद्रित रहा जिन्हें लम्बी-लम्बी आहों के पश्चात् वे लगातार पोंछती जा रही हैं। उनमें शायद काजल और सुरमे का जादू भी बह गया।

इन सब के बावजूद भी एक आश्चर्य-जनक दृश्य उनके कल्पना जगत में उद्भासित हो जाता है। इस किसी भी स्थिति में आकस्मिक

सथा असम्भावित नही कह सकते। उन्होंने कल्पना ही कल्पना मे देखा कि मिस्टर सोलंकी अपनी टाई की नाट ठीक कर रहे हैं। उनका कोट बंधा का कुछ कस रहा है। सिगरेट का लम्बा कश लेते हुये उन्होंने बडी आतुरता से अपनी प्रेमिका को सम्बोधित करके कहा—"डार्लिंग, बहुत देर कर दी। जरा जल्दी करो न।"

"आती हू।"

मीठी आवाज का यह उत्तर उनको भीतर कहीं गुदगुदा जाता है। उनके चपल नेत्रो मे अकस्मात् वासना से परिपूर्ण मादकता तैर जाती है। निश्चित रूप से आज उनकी प्रेमिका नई नवेली की तरह खूब बन सवर कर आयगी। वह कोई तितली से कम नही होगी जो उन्मुक्त विहार करती है। सजधज और मौज-मजे लेने मे उसका कोई मुकाबला नही। सब ओर—चतुर्दिक—खुशियाँ ही खुशियाँ! नृत्य, गान और मधुर मिलन! निःसंदेह इसके प्रभाव से रात्रि के आंचल मे रंग बिरंगी कलियाँ खिल जाती हैं, जिनकी हल्की हल्की सौरभ से हवा भी बोझिल है। कौन है जो आज के इस मद-मस्त वातावरण मे आनन्द और तृप्ति की अन्तिम घूट तक पीना नही चाहेगा?

"आया! तुम बेबी का ख्याल रखना।

"जी, अच्छा।"

प्रणयातुर नायिका जाते-जाते अपनी लाडली बच्ची के सिर पर दुलार से हाथ फेरती है, इसके बाद उसके पाव द्वार की दिशा मे धक्धक बढ जाते हैं।

अब प्यासा सावन खूब गरज-गरज कर बरसेगा। तब वासना उत्कण्ठित हृदयो को वह शीतलता प्रदान करने की चेष्टा भी करेगा।

प्यास बुझेगी या नहीं, कौन जाने ?

इधर पिछली कई रातों से आया इस नन्ही बच्ची को बराबर सम्हालती आ रही है, कभी मन से—कभी बेमन से। जब काफी समय बीत गया और बेबी ठीक तरह से सो गई तो पास के बगले का नौकर यानी उसका प्रेमी—उसका चितचोर—एक लम्बी प्रतीक्षा के बाद दरवाजे पर आ धमका।

'आती हूं जरा सब्र करो ।"

मिलनातुर प्रेमिका अब अपनी मेम साहब की ड्रेसिंग टेबुल के सामने खड़ी है। उनकी सारी वस्तुओं को वह साधिकार इस्तेमाल कर रही है। अन्त में मेक अप खतम हुआ फिर वे एक दूसरे की कमर में हाथ डाले मुक्त भाव से कमरे के बाहर निकल जाते हैं। वे जल्दी में दरवाजा भी लगाना भूल गये।

उसके पश्चात् का दृश्य बड़ा ही रोमहर्षक है। न मालूम कब बेबी की नींद उचट गई। अपने आसपास किसी को न पाकर वह खूब जोर से रोने लगी। इस एकान्त में कौन है जो उसके करुण क्रन्दन को सुने ? केवल कठोर दीवारों से टकरा-टकरा वह और भी मार्मिक हो रहा है।

वह एकदम पलंग पर उठ बैठी। बाद में रोती हुई पलंग के नीचे उतर जाती है। पहले इधर-उधर देखती है फिर अनजाने में कमरे से बाहर आकर सीढ़ियों की तरफ उसके पैर अपने आप बढ़ जाते हैं। और तब और तब ।

'उफ् ।"

डाक्टर वर्मा के मुंह से हल्की-सी वेदना-कातर सीत्कार सी निकल पड़ती है।

इसी समय घबराई हुई दशा मे भागती हुई नर्स आई और फौरन चिल्ला कर बोली—"जल्दी चलो, डाक्टर ! बच्ची की नाडी टूट रही है ।"

"क्या ?"

पल भर म ही डाक्टर वर्मा के परो को अप्रत्याशित गति मिल गई। उद्वेग जनित चचलता उनम स्वाभाविक रूप से आ गई।

इस अशुभ समाचार को सुन कर मिसेज मेहरा हठात् चीख पडी। वे किसी भी तरह इस आघात को सह न सकी और शीघ्र ही अचेत होकर फर्श पर गिर पडी।

मिस्टर सोलकी तो सुन कर एकाएक पत्थर के समान जड और निश्चल हो गये।

•

और दीपक बुझ गया

एक छोटा सा दीपक जल रहा है। अबोध बालक के होठों पर खेलने वाली पतली सी निष्पाप और ममतामयी मुस्कान लिये हुये उसकी प्रज्ज्वलित शिखा चुपचाप खडी है। कहीं कोई विकार नहीं, कहीं कोई उद्दण्डता नहीं। है केवल निर्विकल्प शांति! उसका यह निरपेक्ष सा भाव आकर्षक है—हृदयग्राही है। उसके इर्द गिर्द छोटे-मोटे पतंगों का पूरा जमघट है। मन्द-मन्द ध्वनि करते हुये वे अविराम गति से मंडरा रहे हैं। परन्तु शिखा अपनी धुन में मस्त है—लवलीन है, बस आसपास के अस्तित्व को भूल कर वह लगातार जल रही है। न धुआं है और न लपटें फिर भी जलना! उड़ते हुए मच्छर और भुनगे पास आते हैं फिर प्रमाकुल हो अपने प्राणों की आहुति तक दे डालते हैं।

कैसा है उनका दीवानापन ! एक तरफ फर्श पर राख का ढेर जमा हो रहा है दूसरी तरफ वह निष्ठुर इससे बिल्कुल बेखबर है—निश्चिन्त है। मानो उसकी दृष्टि में इस आत्मोत्सर्ग का कोई मूल्य नहीं—इस आत्म-बलिदान का कोई महत्त्व नहीं। सब कुछ जैसे अर्थहीन और बेकार !

रात घिर आई है अंधेरी सी, बिल्कुल ठण्डी और पहाड़ सी लम्बी व बोझिल ! धरती इतनी गीली है मानो आसमान के आंसू बह बह कर उसे नम कर गये है। ऊपर चमकीले गड्डे हैं उनमें से धीमा धीमा दर्दीला आलोक रिस रहा है।

गली में अवमग्न सा सन्नाटा गहरा हो गया है। जन कोलाहल अब शांत होकर प्रत्येक घर में सिमट आया है। तारे स्तब्ध है। चंदा की चांदनी भी उस दिगन्त व्यापी कोहरे में मलिन सी प्रतीत होती है। रह रह कर गली में कुत्तों के भौंकने की लम्बी और डरावनी आवाजें सुनाई पड़ती हैं, जो पल भर में प्रकृति के इस नीरव सन्नाटे को अत्यन्त भयप्रद और असह्य बना देती हैं।

जाने क्या बात है कि रजनी अभी तक इस दीपक को टकटकी लगाये हसरत भरी निगाहों से ताक रही है। यूं वह एक सूने भाव तथा निश्चेष्ट मन स्थिति लेकर बैठी है। इस पर भी सिर भारी है—आंखों में बेहद जलन है। हृदय में विषाद का धुआं घुट रहा है। उसकी अशांत दृष्टि और अस्थिर पलकें कहीं गहरे शोक से आच्छन्न हैं। पता नहीं कब, गाल पर आकर आंसू सूख गये हैं। दो मोटी धाराओं के निशान अब तक शेष हैं। निस्पन्द होठों पर कुछ शब्द आते हैं पर अवश तथा निष्क्रिय भाव से दूसरे पल कुछ सलवटें छोड़ कर वापिस गले के नीचे उतर जाते हैं।

स्पष्ट है कि छोटा सा यह दीपक स्मृति के रूप में जलाया

गया है। इस सम्बन्ध मे भिन्न भिन्न मान्यतायें हैं—अपने-अपने विश्वास हैं। किन्तु यह निर्विवाद रूप से सही है कि यह छोटा-सा दीपक स्वर्गवासी की दिलकश याद को अपने उज्ज्वल प्रकाश मे अविस्मरणीय किये हुये है। इस दृष्टि से इसका कुछ कम महत्व नही।

अचानक दीपक की पतली शिखा में एक हसता हुआ प्रफुल्लित चेहरा उभर आया। प्यारा प्यारा, निश्छल और भोला भाला। वही चिर परिचित मोहनी मुस्कान, जो हमेशा होठो पर नृत्य किया करती थी। वही बडी बडी प्रममयी लजीली आखें, जिनमे सम्मोहन का अद्भुत जादू भरा रहता था। लुभावनी स्निग्ध मुख छवि जो पहली ही भेंट मे स्वभावगत सौम्य और बुद्धिगत प्रखरता की अमिट छाप छोड जाती थी। इसके प्रभाव से क्षण भर मे अन्तर स्रोत तक तरल हो जाते हैं। तब सवप्रथम प्रीतिकर मौन और सुखद आश्चर्य मे डूबने-उबरने लगते हैं, इसके पश्चात् आत्मीयता की अनुराग पूर्ण उष्णता प्रगाढ हो जाती है। इसे कोई चाह कर भी रोक नही सकता।

इस समय रजनी पर विचित्र-सी प्रतिक्रिया हुई माना उस पर एक प्रकार की मोहिनी फूक गई हो। आत्म विस्मृति का यह भाव उस पर बहुत दर तक हावी रहा। शोकाच्छन्न हृदय भी तुरन्त खिल उठा। आखिर क्यो नही खिले? —उसके हृदय के हार उसके सम्मुख खड हैं। सदव की भाति मधुर मुस्कान की निर्मल छवि लिये हुये।

रजनी तो एकदम निहाल हो गई। वह वतमान दश को भूल गई—अतीत के दद को विस्मरण कर गई। भाग्य की विडम्बना से ग्रसित होकर भी आज वह कितनी खुश है मानो उसे अपनी खोयी हुई निधि अकस्मात् मिल गई। यह एक ऐसा चमत्कार है जो मृत प्राय व्यक्तियो के शरीर म भी नये प्राणो का सचार कर जाता है।

भावावेश में उसके नेत्र हठात् चमक उठे। उनमें आनन्द और सुख की ज्योति अनायास जगमगा गई। तिमिराच्छन्न मानस भी इससे आलोकित हुये बिना न रहा। अब तो उसमें अनकानेक मधुर स्मृतियां पुनः सक्रिय हो गईं। कुछ भूली बिसरी बातें भी उनमें तैरने लगी और जड़ता की पथरीली चट्टान को तोड़ कर वह एक निर्झर के रूप में बहने को आतुर जाग पड़ी।

अब क्या था?

रजनी आत्म लीन है। अपलक एवं पलकें बन्द करके वह आनन्द के आंसुओं का घूंट पीते हुये उन्हें अपने आंचल में समेटने का प्रयास करती है। कहीं ये अविस्मरणीय क्षण चेतना में से अदृश्य नहीं हो जाय, इस ओर से वह पूरी तरह सतर्क है—सावधान है!

× × ×

पता नहीं कैसे, वह पहली ही मुलाकात में उसे अपना नादान दिल दे बैठी। कालेज में वे नये-नये आये थे। एक मेधावी और प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तित्व किसी भी बाह्य आवरण में छिप नहीं सकता। उस पर वह अनुराग से दीप्त मुस्कान! आजाने ही दिल में हलचल मचा देने वाली। अचम्भा तब हुआ जब वह उसके किशोर मन के आसपास नागपाश की तरह लिपट गई।

रजनी एक खिलती हुई सुकुमार कली, जो प्रेम के अनुभव से बिल्कुल अनभिज्ञ! नयनों के मौन कटाक्ष और बांकी चितवन की पैनी छुरी का वह अभी तक अर्थ समझ नहीं पाती। बिल्कुल भोली है वह। लजीली शर्मीली, फिर भी वह बावर भंवर की तरह मंडराने लगती है परिणाम से अनजान बनकर! जाने कैसी कशिश है उसमें!

जहां तक मनत्व का प्रश्न है, सभी का उससे कोई न कोई

मतलब तो रहता ही है। परन्तु उसके निजी जीवन अथवा निजी दृष्टिकोण से क्या मतलब है दूसरो को ? —वास्तव म यही बात क्षोभ और दुःख उत्पन्न करती है ! वह जैसा है जो कुछ भी है अपनी तरफ से ठीक है—उचित है। दूसरा को इससे क्या लेना देना ? अत उसकी प्रतिभा देख कर केवल ऊपरी और झूठा मान देते हैं सभी। अगले साल थीसिस सब्मिट करनी है तो देखते कि किस तरह चेहरे पर सौजन्य पूर्ण मुस्कान बिखेर कर और खीसें निपारते हुये उससे रोज नमस्ते कर ली जाय ! जिन्हे बने बनाये और लिखे लिखाये नोटस चाहिये या फिर किसी खास सब्जेक्ट की तैयारी करनी है, वे चापलूस बन कर खुशामद करते हुये सीधे उसके पास चले आते है। जैसे वह एक कामधेनु गऊ है जिसे स्वार्थवश जब चाहा तब दुह लो।

'यदि आप इसी तरह परिश्रम करती रही तो थीसिस शायद काफी समय पहले ही पूरी हो जायेगी।"

'जी, सर ! सिर्फ आपकी हेल्प पर सब कुछ डिपेण्ड करता है।

कहते हुए रजनी के लावण्य-युत मुख पर मोहक कृतज्ञता की हल्की हल्की छाया तर गई।

इसी तरह का मोहक और लुभावना भाव उसकी कजरारी पलको म भी अपने आप आ जाता है जब वह उसे अपने ताजे लिखे हुए नोट्स देता है। किस तरह गुलाब के रंगीन फूल की तरह खिल उठती है वह ! एकदम मुक्त भाव से चिड़िया की तरह उसका चहकना ऐसा लगता है माना भीतर का आवेग रखना नही जानता।

'सर, आपकी कृपा रही तो तो मैं जल्दी ही ।'

वाक्य अधूरा छोड कर वह स्वय खिलखिला कर हस पडती है फिर बाद म अपने आप सकुचित भी हो जाती है।

इधर मच्चे मोतिया की बडी थे मदा रजनी की द त पक्ति का वह एव म दसता है। तब कही मुदर घू य मे वह खो-सा जाता है। जाने कसे कैसे भाव पूण सपने उमकी पलको म अनायास तैर जाते हैं।

कि ही ख्याला मे डूब कर एक दिन वह कुछ कहन की कोशिश करता है।

"रज्जो ! एक बात कहू।"

अपनी नुकीली नाक को फुलाते हुए उसने आह्लादित स्वर मे जवाब दिया—"हा, कहिय।"

"बुरा तो नही मानोगी ?"

"जी नहीं।"

रजनी की बडी-बडी हसती आखो की चचल दृष्टि हठात् पलको म स्थिर हो गई।

गहर घू य से घिरी आत्मा म से एक निराशा-जनक स्वर बडी मुश्किल से निकला।

"रजनी ! तुमने एक गलत आदमी को चुना है।"

' क्या !"

लडकी की हास्योज्ज्वल दृष्टि सहमा आहत हो गई। उसके होंठो पर प्रश्न चिह्न अपने आप उभर आया।

"वो कसे ?"

"तुम जानती हो कि मैं कौन हू ?" —झिझकते हुय उसके मुह से रुक रुक कर ये कठोर शब्द निकले।

"जी हा।" —कुछ क्षण ठहर कर रजनी अभिमान से बोली।

वह जैसे स्तब्ध रह गया। अब वह क्या कहे ? इसी सोच विचार में उन दोनों के मध्य असह्य मौन का बोझिल टुकड़ा सरक आया।

अन्त में रजनी व्यंग्य पूर्ण स्वर में बोली—"क्या आज के समय में भी जात-पात, ऊंच-नीच और छोटे बड़े के इतने कठोर बंधन हैं, जिन्हें हम चाह कर भी नहीं तोड़ सकते ?

प्रश्न तो जैसे प्रश्न है जो विद्रूप भरी आवाज में उस वातावरण के अन्दर घनी देर तक अनुगूंज पैदा करता रहा। परन्तु वह किंचित् मात्र भी विचलित नहीं हुआ। उसने दार्शनिक की तरह गम्भीर बन कर दृढ़ स्वर में कहा— नहीं ! मैं समझता हूं कि कानून चाहे कुछ भी कहता रहे, पर सवर्ण समाज लौह आवरण में बंधी अपनी संस्कारगत मर्यादा को कभी भेदने नहीं देता, विशेषकर शादी-ब्याह के मामले में। आज के संदर्भ में भी यह एक हास्यास्पद तथा निरर्थक कल्पना है।"

इस बार रजनी ने अपनी नजरें उठाईं। उसमें अविचल दृढ़ता है—अटूट संकल्प की सी पवित्रता है।

'मैं कुछ नहीं जानती।" —वह आत्म विश्वास से गर्वीली आवाज में बोली—' मैं तुम से प्यार करती हूं—सिर्फ प्यार !"

वह अवाक् है—एक प्रकार से निरुत्तर !

× × ×

'पिताजी ! ये हैं हमारे प्रोफेसर रामरतन आर्य, जिनका जिक्र अक्सर मैं आप से करती रहती हूं।" —परस्पर परिचय कराने के उद्देश्य से सलज्ज मुस्कान के साथ रजनी ने धीरे से कहा।

"मुझे आप से मिल कर बडी खुशी हुई।'

औपचारिक रूप से कहे गये इस वाक्य के साथ पंडित विष्णु दत्त ने प्रोफेसर आय का हार्दिक स्वागत किया। इससे लगा कि पंडित जी काफी मिलनसार और व्यावहारिक व्यक्ति हैं।

इधर रतन ने भी अभिवादन की मुद्रा में विनम्र बन कर दोनों हाथ जोड़ दिये। इसके उत्तर में शिष्टाचार के नाते पंडित जी ने नमस्ते की। फिर कुछ स्मरण करके वे बोले— शायद मैंने आपको कहीं पहले भी देखा है।"

"जी हां! खूब याद आया।" —पहचान कर रतन बोला— पिछले दिनों मैं आपकी दूकान पर जूते खरीदने आया था।"

अच्छा।' —पंडित जी इस बार थोडा झेंप गये।

क्या करें? मजबूरी में यह काम भी करना पडता है।"

'इसमें क्या हर्ज है। —कदाचित् प्रोफेसर आय उनके भीतर की हीन भावना को भली भांति समझ गये—' ईमानदारी और परिश्रम से किया जाने वाला कोई भी धंधा या काम बुरा नहीं होता।"

"जी हां! आप बिल्कुल सच कहते हैं।" —पंडित जी ने भी तत्काल समर्थन में सिर हिला दिया।

रजनी चाय-नाश्ते का प्रबंध करने अब तक रसोई की तरफ बढ़ चली। आज उसका हृदय बेहद खुश है। यूं वह रतन को बहुत खुशामद करके यहां तक लाई है। लेकिन आशा के विपरीत पिताजी भी इससे काफी प्रभावित हुये से लगते हैं। सचमुच यह उसकी उल्लेखनीय सफलता है—उम्मीद से कहीं ज्यादा! लक्षण शुभ ही दृष्टि-गोचर होते हैं।

इस बीच उन दोनों को वांछित और अपेक्षित एकांत मिल गया। इधर उधर की बातें होने लगी। पंडित जी एक अच्छा श्रोता पाकर अपने प्रगतिशील दृष्टिकोण तथा स्वतंत्र विचारों की डींग हाँकने लगे। उनके कहने का तात्पर्य यह है कि वे व्यवहार में अनुदार और स्वभाव से असहिष्णु कभी नहीं रहे। किसी विरोध की परवाह नहीं करते हुए भी उन्होंने बड़ी शान से यह जूता की दुकान खोली है। बिरादरी वाले जिनमें कुछ तिलक और जनेऊधारी ही प्रमुख हैं, भला अपनी नाक के नीचे इस अन्याय और अपराध' का कैसे सहन करते! धर्म की दुहाई देकर वे जल कर बातें बनाने लगे। फब्तियाँ कसी—कड़ुवे बोल बोले मगर मैं भी टस से मस नहीं हुआ।'

कमाल है।'

पंडित जी के मुख पर दर्प का विचित्र भाव आ गया—आत्मश्लाघा से परिपूर्ण! बीच बीच में विजयोल्लास की मुस्कान भी दीख पड़ती है। उसके अस्तित्व की सूचना तो उनके गौरव गरिमा में मानो चार चाँद लगा देती है।

इससे एक बार तो प्रोफेसर आर्य की पूर्व निर्धारित धारणायें समस्त नष्ट होती सी लगी। उनके प्रति मन में श्रद्धा और आस्था का भाव अपने आप सजग हो गया। रस लेकर वह भी अब आदरपूर्वक उनकी बातों में शरीक है, जो प्रत्यक्ष दृष्टि से स्वाभाविक है।

तभी पण्डित जी ने बीच में उनसे पूछ लिया—"आप तो शायद कान्यकुब्ज ब्राह्मण होंगे?'

रतन थोड़ा सोच में पड़ गया। हृदय में दुविधा बनी रही कुछ देर तक। पर ऐसे आधुनिक विचारों वाले व्यक्ति से झूठ बोलना बुरी बात है। अकारण ही अपने जाति गोत्र को छिपाने से भी क्या

लाभ ? क्या किसी को व्यर्थ में अंधेरे में रखा जाय ? सच्ची बात कहना ही ईमानदारी का तकाजा है ।

"जी नहीं।" —व * सवाल के साथ गात स्वर में प्रोफेसर आय ने जवाब दिया— मैं जाति म हरिजन ह।'

"क्या ?"

जैसे भयकर विस्फोट हो गया। जहा पण्डित जी की आखो म अभी अभी हर्ष और उल्लास की चमक थी वहा अब आकस्मिक घृणा एव अप्रत्याशित तिरस्कार का विष झलक आया। स्पष्ट है कि उनके सस्कारगत हृदय को इससे एक करारी ठेस लगी। विवेक-शून्य से होकर व साधारण मानवीय व्यवहार और शिष्टाचार को भी फौरन तिलाजलि दे बैठे।

वे अब वक्र मुस्कान लेकर बोले— सच, तुम तो अपने नाम को भी सार्थक करते हो आय अनाय या।"

इतना सुनते ही रतन को एक जबरदस्त धक्का लगा। वह एक दम सकपका गया। कुछ क्षण वह हताश भाव स उनक मुह की ओर खोज पूर्ण दृष्टि स एकटक ताकता रहा। फिर हकला कर बोला— यह यह आप क्या कह रहे है ?

"कान खोल कर सुन लो।' —पण्डित जी क्रोध म एक हृदय-हीन व्यक्ति की तरह गरज— 'हालाकि मैं फारवर्ड जरूर हू, लेकिन इतना नहीं कि मै किसी शेडयूल कास्ट आदमी क साथ अपनी लडकी का मिलना जुलना पसन्द करू। यह भी याद रहे कि रजनी भी अपनी व्यक्तिगत खुशी के लिए मेरी आज्ञा का उल्लघन कभी नहीं करेगी और न अपने परिवार की मर्यादा तथा सम्मान पर कभी कीचड उछा-लेगी। तुम हो किस भ्रम म।"

प्रोफेसर आय के चेहरे पर एक दहशत सी छा गई और मन किसी कड़ुवाहट से भर गया। पर जब उनकी क्रूर आंखों से नीचता टपकती देखी तो तमाम चेहरे का भाव बिल्कुल बदल गया। अब वह जितनी देर उनकी तरफ देखता गया मन में उतने प्रति उतना ही रोष एवं घृणा बढ़ती गयी। प्रतिक्रिया स्वरूप वह पूरी ताकत लगा कर चीख पड़ने को तैयार हो गया। अपमान की यह यंत्रणा कहीं भीतर तक उसे चीर गई। गुस्सा तो ऐसा आया कि इस दुष्ट का गला घोट दें या फिर उसकी जातीय उच्च-कुल की भावना से उन्नत मस्तक को एक दम कुचल डाले ताकि इससे शेष जीवन वीभत्स बन जाय।

तो भी उसने बड़ी कठिनाई से अपने आवेश को रोका। जहर का घूंट पीकर और एक तरह से बजुवा बन कर वह उस घूत के पास से अविलम्ब ही चला आया। ऐसे बनावटी और प्रवचना पूर्ण वातावरण में तो उसका दम घुटने लगता है। इससे तो कहीं अच्छा है कि वह निलक्ष्य और निरुद्देश्य कहीं घूमता रहे।

× × ×

इसके पश्चात् घटना चक्र बड़ी तेजी से घूमा। इसकी किसी को कल्पना तक नहीं थी।

शायद पण्डित जी का अब अपनी बेटी पर इतना विश्वास नहीं रहा, इसलिए उनकी सशंकित—कठोर दृष्टि लड़की को घेर में कैद करके बैठ गई। जी नहीं भरा, शायद यह यातना भी कम है। परिणाम स्वरूप वे किसी कुलीन घराने के लड़के से इधर रानी की शादी करने पर उतारू हो गये। इससे भावावेश में लड़की कोई गलत कदम न उठा सके। परम्परावादी और रूढ़िवादी अभिभावक भला इस

सम्भावना का कैसे भूल सकते हैं।

दूसरी ओर उस लडके से शादी न करने का समझदार लडकी का विरोध दिन प्रतिदिन प्रबल होता गया। अब टकराव होना अवश्य भावी है। इस तनाव से प्रेरित होकर पण्डित जी अपना रहा सहा धैर्य भी खो बैठे। वे भूल गये कि यह युवा पीढी का रचनात्मक विद्रोह है। जब युक्ति से काम न चला तो क्रोध ने उनकी बुद्धि हरण कर ली। अब वे असह्य यातनायें उन पर सक्रिय रूप से विचार करने लगे। वे सरल और दयालु पिता के स्थान पर एकदम जैसे नर पिशाच बन गये। स्नेही और सहृदय पिता का यह रूपान्तर अपने आप में जहा विस्मय जनक है, वहा यह घातक और भीषण भी ज्ञात होता है। पता नही कब क्या हो जाय कोई ठीक ठीक अनुमान नही लगा सकता।

परन्तु इन सब यन्त्रणाओ के बीच मे भी रजनी अपने निश्चय पर अटल रही। पिता की निष्ठुरता उसके सकल्पशील मन को तनिक-सा झुका न सकी। उनका परास्त हृदय क्रोध के उन्माद मे जैसे विक्षिप्त-सा हो उठा। वे अधिक यातनायें एक निरकुश की तरह बराबर देने लगे।

वैसे प्रेम भी अपनी निर्भ्रान्त अभिव्यक्ति चाहता है। उसकी भावनायें स्पष्ट हैं। जिस निष्ठा के साथ उससे अचलता की शर्त जुडी रहती है—वही अकृत्रिम प्रेम है। उसकी आस्था अविचल है—असन्दिग्ध है। तब काल्पनिक जगत छिन्न भिन्न होकर प्राय उसकी दृष्टि यथार्थ की भूमि पर केन्द्रित हो जाती है। निर्झर के समान उमडने वाली यौवन की उमग कोई समाधान खोज लेने के लिये प्रयत्नशील है। यह एक तरह से दीवानेपन की स्थिति है जिसे कभी नकार नही सकते। उन्हे तो जीवन का सुख चाहिये। बस सुध बुध खोकर वे प्रेमी हृदय एक आसान तरीका ढूढ निकालते है। मौका

पाकर व कही अज्ञात स्थान की ओर चुपके से भाग जाते है।

किन्तु यह समस्या का समाधान कतई नही है। शायद वे नादान आवेश और उत्तेजना म इस सत्य को बिल्कुल भूल गय। दखत देखत भयानक परिस्थितिया ने उन्ह चारा तरफ से आ घेरा। वास्त विकता का अनावृत रूप ज्या ज्या उनके समक्ष स्पष्ट होता गया त्या त्या वे अज्ञात भय से त्रसित हाने लगे। इस पर भी उन दोना ने पराजय स्वीकार नही की। विपमताआ से जूझने रहे—असगतिया का डट कर मुकाबला करत रहे, जैसे उन्होने नत मस्तक हाना तो सीखा ही नही है।

× × ×

'रज्जो!"

"जी!'

'इतने दिना तक जो कुछ पास म था वह खाते रहे मगर आगे अब कसे काम चलेगा? चिता इस बात की है?" —प्रश्न पूछ कर नराश्य भाव से प्रोफेसर आय न रजनी की आखा में झाका, जिनके आस-पास काले-काल अवसाद के घेर बन गय है।

वह क्या उत्तर देती! उससे क्या छिपा है! एक विराट त्रास का अजगर जसे उन्ह निगलने के लिये धीरे धीरे आगे बढ रहा है। उससे त्राण पाने का कोई उपाय नहीं।

'यह शहर जितना बडा है उसी अनुपात म यहा के निवा सिया के दिल भी बहुत छोटे हैं। नौकरी की बात जाने ही दें, तो भी कही ठहरने को मुसीबत सामने आने वाली है। मिश्रो ने कोरा जवाब

द दिया। जो भी हैं, वे सभी इस समय मुह चुराते हैं। इतना ही नहीं, वे हमारी प्रगतिशील भावना की भी जी भर कर भत्सना करते हैं।"

लगा जैसे नसा मे उबलती कोई भयानक पीडा आखो की राह बाहर आना चाहती है। किन्तु रतन है, जो उसे जबदस्ती रोकना चाहता है।

" ऐसे कई विद्यार्थी हैं जिन्हाने मेरी प्रेरणा और सहयाग से कई उच्चतम परीक्षाये पास की है। इसके अलावा वे सुगमता स पी-एच० डी० की वैतरणी पार करने मे भी सफल हो चुके हैं। वे आज बीच सडक पर मुझे देखते ही अवज्ञा और उपेक्षा से आखें फेर लेते है। जसे मैं बहुत बडा अपराधी होऊ ।'

इस कथन के साथ उसका दिल और दिमाग दोनो भट्टी की तरह दहकने लगते हैं।

कुछ पल ठहर कर वह आक्रोश पूर्ण स्वर म फिर कहने लगा—'क्या ही अच्छा होता कि अगर मैं आदमी की जगह एक भयकर ज्वाला मुखी होता। अचानक फट कर मैं गम गम लावे से इन अहजीवी पाखडिया को एक क्षण मे भस्म कर देता ।"

रजनी ने एक नजर उस पर डाली। पता नही यह हताशा का करुण क्रन्दन है या विषाद का कातर विलाप। फिर भी एक ठण्डी सिहरन उसकी नस-नस मे तडित वेग से दौड गई। अपने अन्दर के उबाल को किसी न किसी तरह रोक कर उसने धैय से कहना चाहा—आप चिन्ता न करें। कोई न कोई रास्ता निकल ही आयगा।"

'हुम् ।'"—रतन के हाठ व्यग्य के तीखेपन से टेढे हा गये—

शायद तुम यह कहना चाहती हो कि नदी सूख गई तो क्या हुआ इससे एक रास्ता तो बन ही जाता है। हा हा हा ऽऽऽ।"

हठात् मुंह से निकले इस क्रूर अट्टहास के पीछे कितना दर्द है, यह तो भुक्त भोगी मन ही जानता है।

सुनते ही रजनी के चेहरे पर निर्जीव सी खामोशी छा गई। उसका मुंह इतना सा निकल आया।

'लगता है, जैसे तुम भ्रांतियों में जीना सीख गई हो।

इस बार भी प्रोफेसर आर्य ने एक बड़ा-सा पत्थर उठाकर दे मारा। आघात स्पष्टतः असहनीय है—कष्टकर है। यद्यपि इसके उत्तर में भी रजनी ने असाधारण आत्म नियंत्रण का परिचय दिया। एक नारी होकर वह इस संकटापन्न स्थिति में भी सागर के निकट एक चट्टान के सदृश जैसे अचल और अजेय खड़ी है। प्रलयकारी लहरें आती हैं मगर वे उससे टकराकर लौट जाती हैं। अभी तक उसके मन में पराभव का कोई विकार नहीं।

रतन कुछ देर नभ शून्य में निरीह सा ताकता रहा। सहसा उसकी मुखाकृति अत्यन्त विकृत हो गई। भीतर का आवेग अचानक होठों पर आकर बिखर गया। आंखें वीभत्स हैं और माथे की नसें तनी तनी सी।

तभी उसने घूर कर रजनी को देखा, फिर असहाय सा बोला—"मैं खूब जानता हूं कि एक दिन तुम भी मुझ से ऊब जाओगी और तब और तब हा हा हा।"

एक बार फिर वह डरावनी हंसी पूरे कमरे में गूंज गई।

यह पहला अवसर है कि रजनी इस विद्रूप भरी पागल हंसी से एकाएक कहीं भीतर तक कांप गई। वह अच्छी तरह जानती है कि यह

असतोष कितना व्यापक और खतरनाक है—एक तरह से आत्म घाती ! यह अविश्वास उनके जीवन पथ का कटकाकीर्ण भी कर सकता है इसमे कोई सशय नही। एक आशका से भरा भय रह रह कर उसे सालने लगता है। वास्तव मे वह कुलीन है, इसलिये रतन के हृदय मे एक दिन उसके प्रति शीघ्र ही अनास्था और अश्रद्धा उत्पन्न होगी। इस भावना को पार पाना असम्भव लगता है। यद्यपि वह रतन को समझाना चाहती है कि वह इस कदर कमजोर दिल और सकीर्ण मन की लडकी नही है। अगर ओछे स्वभाव और हीन प्रवृति की होती तो उसका हाथ पकड कर इस मजिल पर कैसे निकल पडती !

इस समय रुग्ण मन स्थिति वाले व्यक्ति को समझाना जरा मुश्किल है ! फिर जिसके मन मे समाज ने कटु सस्कार बो दिये है, उसका तो कहना ही क्या ! वह हर सीधी बात का उल्टा अर्थ ढूढ निकालता है यही तो कठिनाई है।

सोचते सोचते रजनी ने जब अपनी झुकी हुई पलकें ऊपर उठाई तो हैरान रह गई। रतन इस बीच जाने कब का कमरे से बाहर चला गया था।

× × ×

आखिर कोई लडे तो किससे ! बेकारी से, अभाव से या उन जटिल समस्याओ से, जिन्होने मिलकर एक दुर्बल मानसिक पृष्ठभूमि का निर्माण किया है। इससे विद्रोह का शक्तिशाली स्वर भी जाने कैसे अन्तर विदारी प्रलाप मे परिवर्तित हो जाता है। अकेलेपन की अनुभूतियें तो अब कलेजे मे फास-सी गड रही है। इसके साथ मानसिक स्तर पर हीन भावना की ग्रथियें भी कभी-कभी त्रस्त कर जाती है। तब अपने

आपको साथ पाना दुष्कर लगता है।

एक गहरी सांस अपने भीतर खींचकर रजनी अकस्मात् अपने दोनों नेत्र बन्द कर लेती है। कैसा तो अवश सा भाव उसके रोम रोम में भर जाता है फिर भी वह तनाव शैथिल्य का उपसर्ग ही मालूम नहीं देता।

एक क्षण भी व्यतीत नहीं होता इसी समय आधे नंगे,उज्ज्वल और अधपके बालों वाली एक प्रौढ़ा साधिकार घर का दरवाजा खोलती है। देखते ही आश्चर्य से रजनी की पलकें अनझपकी रह जाती हैं। अपने ढले हुए यौवन को सवारने का उसका प्रयास उसे कुछ हास्यास्पद सा लगा, जो केवल मन में सहानुभूति का भाव पैदा करता है।

प्रौढ़ा निकट आती गई। हाथ के अखबार को समेटकर उसने कहा—' नमस्ते !''

' बठिये।'

भावहीन अभिवादन के साथ रजनी ने उसे अपने पास बिठाया—कहिये।''

''वैसे कोई खास बात नहीं।''—प्रौढ़ा ने मुस्कराते हुए कहना चाहा— मैं आपके पडोस में रहती हूं। आपकी मुसीबत की कहानी मुझसे छिपी नहीं। यूं पडोसी पडोसी के काम आता ही है, लीजिए।''

मोटे मोटे होठों की यह उदारता देखकर रजनी सहसा दंग रह गई। यह भावना स्वार्थवश है या अधिक घनिष्ठता और सौजन्य का परिचय देने की चेष्टा मात्र है। घड़ी भर के लिए उसकी असमंजस से परिपूर्ण दृष्टि उन नोटों पर जमी रही।

मैं आपको अच्छी तरह जानती हूं—देखिये !''

प्रौढ़ा की वह रहस्यमय दृष्टि अचानक ढीठ हो गई। उसने

अखबार मँगाया। उसके एक कोने में उन लोगों के बारे में कुछ छपा है। फोटो भी दिये हैं। इसका आशय स्पष्ट है। पंडित विष्णुदत्त ने प्रोफेसर लाय पर अपनी लड़की को भगाने और साथ ही चोरी का मनगढ़न्त अभियोग भी लगाया है। उनका पकड़वाने में सहायता करने वाले को शायद किसी इनाम की भी घोषणा है।

रजनी को जैसे साँप सूँघ गया। धमनियों में रक्त-प्रवाह जमता महसूस हुआ। जिस भय के आतंक से वह अब तक परेशान थी वह एक पिशाच के समान सम्मुख आ खड़ा हुआ। अब ?

"अच्छा तो मैं चलती हूँ।" —इतना कहकर वह प्रौढ़ा अचानक उठ गई—' फिर मैं आऊँगी। बेकार की चिन्ता छोड़ो।"

सम्भवतः वह जल्दी ही समझ गई कि तीर निशाने पर लगा है। लड़की का अब एकान्त चाहिये इसलिये नोटों की गड्डी पैरों के पास रखकर वह मटकती हुई वापिस चली गई।

असीम दुःख तथा अपार ग्लानि से रजनी का हृदय घायल पक्षी की तरह छटपटाने लगा। अब वह खण्डित विश्वास और टूटे हुए अरमानों को लेकर भय के अँधेरे में कब तक भटकती फिरेगी, आज के सदर्भ में यही प्रश्न मुख्य है। लगता है उसका दुर्भाग्य उसे खींचकर ऐसे स्थान पर ले आया है जहाँ सारे सपने और अभिलाषायें जल कर राख हो जाती हैं।

शाम के वक्त वे फिर आई। इस बार उनके संग दो लड़कियाँ भी थीं। जवान और हम उम्र। पूरे मेकअप से फैशन की पुतलियें। उनके हाव भाव और रंग ढंग संदिग्ध। सहज ही विश्वास नहीं होता मानो सारे संशय एक साथ ही मिट गये।

रजनी बहन, अगर तुम्हें किसी चीज की जरूरत हो तो हम याद करना।"

निरर्थक आत्मीयता का परिचय देते हुए उनमें से एक लडकी निलज्ज मुस्कान के संग बोली। अगले क्षण उनके फटे आये लिपिस्टिक लगे होठों से रजनी को बेहद घृणा हो गई। आंखों के चुभने वाले काजल से उसे विरक्ति-सी हो आई। भावना-हीन बनकर उसने वितृष्णा से अपना मुंह दूसरी दिशा में फेर लिया।

उन पर इसका कतई प्रभाव नहीं पड़ा।

हम फिर आयेंगी ।"

इस बार रजनी पता नहीं क्या सिर से लेकर पांव तक कांप गई। उनकी आवाज में जो संकेत है एक प्रकार के दुर्विचार से वह परिपूर्ण है इसमें अब लेश मात्र भी संदेह नहीं रहा।

वह चाहकर भी अपनी आन्तरिक अस्थिरता और बेचैनी को दबा न सकी। लगा जैसे उसकी समस्त चेतना कुण्ठित हो रही है। निरपेक्ष शान्ति से दूर, बहुत दूर, जाने कहां वह किसी विराट शून्य में खो गई है।

× × ×

अगला दिन। चारों ओर तेज धूप और ठण्डी हवा।

इसी समय दरवाजे पर आहट का आभास पाते ही रजनी सतर्क हो जाती है। वैसे उसे प्रोफेसर आय का बेकरारी से इन्तजार है जो पिछली शाम से ही घर से गायब हैं। कई दिनों से उसकी आंखों में भयानक पागलपन झांक रहा है। केवल उसी की तो चिन्ता है। उसकी वह सदा बहार मुस्कान अब जहरीली हो गई है जो चाहे-अनचाहे सबको डस लेना चाहती है।

तमाम रात आखो ही आखो म काट दी उसने। इस निद्राहीन अवस्था मे उसकी तबीयत भी ठीक न रही और दिन भी पूरी तरह बेचन रहा। रात्रि जागरण के कारण अभी तक उसकी पलक भारी हैं और उनम बेहद जलन है।

अब भी वह बिस्तर यू ही पडा है खाली और सलवट भरा! उस समटने को मन नही हुआ। वह तो केवल इस कमरे के परायेपन को अपने से लपट अप्रासगिक सी बैठी है। उसका नि शब्द मौन ता काटने दौडता है। एक विद्रूप सा उलझाव अभी तक उसके मस्तिष्क मे जमा हुआ है जो ठीक ढग से सोचने भी नही देता।

अचानक दरवाजे के पास हल्का हल्का शोर हुआ जैसे कई मानव-कण्ठ एक साथ बोल रहे हैं। रजनी के चिन्तन मे अनजाने ही व्यवधान पडा। यही नही बल्कि थका हुआ एक अस्पष्ट सा भ्रम उसके मन म उठा और शीघ्र ही कसे हुए होठो से बाहर निकल पडा।

' होंगे कोई गली के दूसरे लोग।'

भडभडा कर इतने मे दरवाजा खुलता है और कुछ लोग बेहिचक घर म प्रवेश कर जाते हैं।

'ले आओ, यही रहते हैं।''

चौंक कर रजनी ने आकस्मिक उत्सुकता से उधर देखना चाहा। ऐसा लगा कि मानो चकाचौंध करने वाला कोई आग का गोला उसके समक्ष आकर अचानक फट गया। अप्रत्याशित रूप से वह भ्रम भी जसे सहस्र टुकडो मे विभक्त होकर इधर उधर बिखर गया। एक बार फिर उसने अविश्वसनीय दृष्टि से उस तरफ देखना चाहा मगर इस बीच पूरा कमरा और उसके अन्दर की सारी वस्तुये घूमती सी नजर आने लगी। पता नही उसके भीतर कैसा विस्फोट हुआ जिससे धूल, राख और आग की लपटें उठने लगी। बस वह तेजी से किसी पहाड की चोटी से

लुढकने लगी और दखते ही दखते उसका पूरा शरीर निर्जीव होकर गया। उसमे कोई गति नही—हलचल नही।

"ाश का फश पर रखते ही उन लोगा मे से एक करुण स्व बोला—'असलियत क्या है कोई कुछ भी नही जानता। हादसे के सडक पर खडे लोग कई तरह की बातें बनाते है। उनम से कुछ चश्म गवाह भी ह। उनका कहना है कि ये जानबूझ कर सहसा गलत साईड ओर आये और फिर चलते ट्रक के नीचे उफ! पागलपन की भी हो गई ।"

लहू लुहान बदन से अभी तक रिस रिस कर ताजा रक्त बह है। यू पूरा शरीर बुरी तरह कुचला हुआ है। उधर निगाह ठहर नही पाती।

हटो दूर हटो।"—तभी वह प्रौढा चार पाच आदमिया लेकर साधिकार आ धमकी—' चलकर दाह-सस्कार का प्रबन्ध करो, वे म भीड करन और बाते बनाने से क्या फायदा!'

उसने अपन आदमियो के हाथों म जल्दी से नोट थमा दिये फिर घूमकर वह उस जड प्रतिमा के पास चली आई, जो कल्पनातीत आघात से मानो एकदम निष्प्राण हो चुकी है।

सवेदना प्रकट करने के उद्देश्य से उस प्रौढा ने रजनी के सि पर अपना हाथ फेरा फिर नाटकीय मुद्रा म मुह बिगाड कर सजल न से बोली—"बेचारी लडकी !"

इसके पश्चात् छाती और सिर पीटकर अपने वालो को ना कर वह इस प्रकार मर्म भेदी विलाप करने लगी—जैसे उनका ही क सगा-सम्बन्धी अभी अभी मर गया है। उनका शोक प्रदशन करने व

बनावटी अभिनय काफी प्रभावशाली रहा।

× × ×

रजनी की आंखों से गंगा-जमुनी धारायें अविराम बह रही हैं। निश्चय ही आज का सूर्योदय उसके दुर्भाग्य की छाती नाम लेकर आया। उनका रहा सहा सुख भी आंसुओं के सागर में डूब गया।

दीपक अभी तक जल रहा है। इस तिमिराछन्न रात्रि के अन्तर की भंवर पर वह अपने अस्तित्व की सूचना बराबर दे रहा है। उसी समय अकस्मात् हवा का कहीं से भूला भटका तेज झोंका आया। दीपक की पतली लौ एकाएक कपकपाई और फिर उसमें से वह हंसती मुख छवि अदृश्य हो गई।

और वह दीपक बुझ गया, केवल उसकी आहों का धुंआ घुटता रहा पूरे वातावरण में।

रजनी किसी आकस्मिक धक्के से क्षण भर में तड़प उठी। उसके सूखे होंठ थरथराये और उनमें से एक मर्म विदारक चीख निकल पड़ी। अश्रु पूरित दृष्टि धुंधली हो गई और पलक झपकते ही उसकी समस्त चेतना जैसे सत्ता-शून्य हो गई।

वह अचेतावस्था में फर्श पर निढाल सी लुढ़क गई।

स्वप्न और सत्य

•

•

चिता कभी की बुझ चुकी है। धरती सूंघते हुए मसानिये कुत्ते बहुत दूर चले गये हैं। यूं ही गर्दन उठा कर और मुंह ऊंचा करके हवा में वे बिना किसी उद्देश्य के भौंकते जा रहे हैं।

एक कठिन चुप्पी में सब कुछ निरीह ढंग से शांत है—मौन है। हवा थमी सी पर साफ नहीं है। अभी तक उसमें चिरायंध की गंध रमी-बसी है। अभेद्य सन्नाटे में डूब कर सम्पूर्ण वातावरण जैसे निष्प्राण हो रहा है। वह मानो टुकड़ों टुकड़ों में बंट कर बर्फ के समान पूरी तरह जम गया है।

जब सती ने लम्बा बांस लेकर चिता को कुरेदना शुरू किया तो पीरू हरिजन चाहकर भी अपने आपको रोक न सका। सख्त नाराजगी

प्रकट करते हुये उसने टोका—"ऐ माई ! यह क्या करती है ?"

माई न इस बार जान बूझ कर सुनी-अनसुनी कर दी।

विवश हो पीरू का उठना पडा। वह पास आ गया तो भ-ना कर बोला—'ऐ माइ ! सुना नही। इस तरह चिता का कुरेदना ठीक नही।"

चिता को कुरेदने से अगारो की ज्वाला पुन भडक उठी। बुझे हुये कोयलो ने दोबारा आग पकड ली। इससे उनकी प्राप्ति की आशा शीघ्र ही धूमिल हो गई। अब सती के मन मे असन्तोष के साथ-साथ क्षोभ का उत्पन्न होना स्वाभाविक है। इस पर पीरू की यह धृष्टता स भरी टोका-टोकी तो विपरीत प्रभाव छोड गई—जैसे जले पर नमक ! वह चोट खाई नागिन की तरह महसा फुफकार उठी—'ऐ पीरू के बच्चे, मैं पहले भी कई बार तुझे मना कर चुकी हू कि तू मेरे किसी काम म टाग न अडाया कर। तो भी हरामजादा मानता नही। याद रख, मैं अब आखिरी बार कह रही हू। अगर तूने आगे स मुझे टोकने की कोशिश की तो इस बास से मैं तेरा सर फाड दूगी।'

इस खीझ भरी चेतावनी से भी पीरू एकदम डरा नही। इसके विपरीत वह ता ठठेरे की बिल्ली की तरह अविचलित दृढता स खडा रहा। चिकने घडे पर पानी की बूद पडते ही अचानक फिसल गई।

'ऐ माई ! तू नही जानती कि यह कस्बे के कितने बड सेठ की चिता है।"

'ऐसी की-तैसी तेरे सेठ की।" अपना एक हाथ हवा म नचा कर सती झुझला कर बोली—'चिता म सब समान होते हैं, कौन

बड़ा —कौन छोटा ! फिर मैं तेरे सेठ को खूब अच्छी तरह जानती हूं और उसके काले कारनामे भी !"

"क्या मतलब ?"

"अहं हं हं कैसा भोला बनता है।" —माई ने जरा मुंह टेढ़ा करके उसे चिढ़ाना चाहा— ऐसे पूछ रहा है जैसे कुछ जानता ही नहीं।"

चुप।

धीरू की कमजोरी का आभास पा सनी और शेर हो गई। वह गरज कर बोली— अरे जा क्या मुंह बिगाड़ रहा है। सच्ची बात कलेजे में चुभ गई—है न ?"

धीरू इस दफा भी मौन रहा कुछ बोला नहीं।

माई की बन आई। भला वह ऐसा मौका कब हाथ से खोने वाली थी। अब तो मन का गुबार निकालने का अनुकूल अवसर अनायास उसे मिल गया। वह पूरे जोश-खरोश से बेहिचक बकने लगी— साला कमीना सेठ ! एक नम्बर का चोर। अच्छा हुआ जो आज मर गया। क्या नहीं किया रे उसने। बोल ! सारे कस्बे को दोनों हाथों से लूट रहा था। राशन की चीनी कपड़ा, केरोसीन का तेल और अनाज तक ब्लैक में बेच बेच कर जल्दी ही वह धन्ना सेठ बन गया। पक्का सूदखोर, काइयां और घाघ। सूद और मूल के लालच में उसने कइयों के घर कुर्क करवा दिये। किसी के रेहन रखे हुये गहने ही हड़प कर गया और डकार भी नहीं ली। और तो और, मोल भाव से लेकर तोल में भी बेईमानी। सभी चीजों में मिलावट ! उधार के नाम पर कभी सही नहीं लिखा और फिर महीने के आखिर में पूरे रुपये बड़ी बेरहमी से वसूल करता। हुंम्म् ! और सुनेगा तारीफ ।'

अपना कथन समाप्त करते सती के सूखे होठों पर घृणा मिश्रित उत्तेजना की टेढ़ी मुस्कान तर गई।

इधर पीरू के चेहरे पर सुनते ही हवाइयाँ सी उड़ने लगी। घबराहट अथवा भय का यह भाव सचमुच म आकस्मिक ही नहीं, अप्रत्याशित भी है।

अचानक विनम्र स्वर म हाथ जोड़ कर वह गिड़गिड़ाया—' ऐ माई, अब तुझसे क्या छिपाऊ ! आपस की बात है। मैंने उसस मैंने उसस ।'

बस विराम ! वाक्य अधूरा रह गया। शायद गले म किसी संकोच के कारण गोला-सा अटक गया।

सती की प्रश्न वाचक दृष्टि संदिग्ध बन कर उसके चेहरे पर स्थिर हो गई।

देर बाद किंचित् झिझकते हुए पीरू ने धीमे कण्ठ से कहना चाहा—' माइ सच बात तो यह है कि इस चिता की रखवाली के लिये सेठ के लड़के ने मुझे चार रुपये दिये ह।"

"क्या ?'

सती की आखों म हठात् विस्मय झलक आया फिर भाव परिवर्तन जो शुरू हुआ तो रुका नहीं। अब तो उसका चेहरा और भी कस गया। गर्दन की नीली नसें फूल गइ। सहसा अगन की एक लपट ऊपर उठी और उसकी आखो मे कौंध गई।

' तो यह बात है। तूने सेठ के बेटे को उल्लू बनाया है और अब मुझे ठगने चला है, क्या ?"

"नहीं तो ।"

एक डरी हुई भीर नजर पीरू ने माई पर डाली, और तब गर्दन झुका ली। माई से आखें मिलाने की उसकी हिम्मत नहीं हो रही है यह साफ है।

जवाब दे।

सती की कडकती आवाज नश्तर की तरह तेज है—चुनौती पूर्ण है।

बिना एक क्षण का विलम्ब किये मुख पर अत्यन्त पराजय का भाव लाकर वह कातर-कण्ठ से बोला—'ऐसी बात नहीं है माई। तू तो बेकार म शक करती है।'

शक के बच्चे, तू मुझे ही बेवकूफ बना रहा है।'

सती के पतले दुबले शरीर म क्रोध की तडपती लहर दौड गई। अभी तक जो कुछ उसके अन्तःकरण म प्रच्छन्न था वह एक बार में फूट कर बाहर आना चाहता है।

"हरामखोर, वह पीतल की थाली लोटा व चरी कहा गई? बोल। और उस कासी के कटोरे का भी पता नहीं। ऊपर से अर्थी का कपडा और लाश का दुशाला भी फोकट म हजम कर गया। अब तेरी ललचाई आखें चिता के इन कोयला पर लगी हैं। मैं तेरी बिगडी नीयत को खूब अच्छी तरह समझती हू।"

" नहीं माई तू मेरा भरोसा कर।"

अबे चल बेईमान।' —पीरू की डूबती करुण आवाज का लाभ उठा कर सती उस पर हावी होने की पूरी चेष्टा करने लगी—'तुझे शर्म नहीं आती। इतना भी ध्यान नहीं रखता कि इस मरघट के पास फूस की कुटिया म बूढ बाबा और माई रहते हैं। वे बस्ती स

भीख माग कर अपना पेट भरते हैं। यहा कभी एकाध मुर्दा जलने के लिय आता है उसके भी सामान मे उन गरीबो का हिस्सा नही ? घोर अधर है बडा ही अधम है। पर इस बार चिता के कोयले मैं लूगी कान खोल कर सुन ले। और किसी ने बाधा पहुचाई तो तो ।"

दोनो हाथो म भूलते बास को रख कर पीरू भयभीत हो गया। उसे लगा कि अभी सती रोष म कसमसा कर उसके सिर को लक्ष्य करके एकदम अचूक प्रहार कर देगी और अगले क्षण सवनाश! अत उसने शीघ्र ही अपनी पराजय स्वीकार कर ली। व्यग्र भाव से उसने कहा—'अच्छा माई! अब तू शात हो जा। चिता ठण्डी होने के बाद मैं खुद सारे कोयले कुटिया मे पहुँचा दूगा।'

'हुई न यह बात!'

आश्वासन पाकर सती का वह चण्डी रूप धीरे धीरे शात होने लगा। थोडी ही देर मे उसका तना हुआ चेहरा पुन सामान्य हो गया और उस पर सूखी सी हसी की स्वर-हीन रेखायें तुरन्त फैल गईं।

× × ×

चौक कर साइदास ने कुटिया के बाहर झाका। द्वार के पास सती नैराश्य भाव से गदन लटकाये खडी है उदास और मौन! लगता है जसे इस मरघट मे रमा बसा भयानक सन्नाटा उसके दिल मे व्याप्त है।

बाबा की तीक्ष्ण दृष्टि उसके विवण मुख पर ठहर गई।

आगे बढ कर साईदास ने भिक्षा की झोली सती के कधे पर से उतारी और अपने हाथ मे ले ली। अरे न म वह खाली है। सती की

खिन्नता एव अन्यमनस्कता का असली कारण यही है।

घडी भर म बाबा की भगिमा अत्यन्त कठोर हो गई।

'क्या, आज भी भीख नहीं मिली?'

सती निरुत्तर ही रही।

क्या बस्ती के लोग भीख दना भूल गय?" पूछ कर बाबा न वह भोली निमम उपेक्षा से दूर फेंक दी।

सती का पाण्डु वण मुख और लटक गया। उसन झिझकते हुये भीरु मन से कहा—"बाबा! आजकल भीख कम ही मिलती है।

क्या कहा कम?'

साइदास की मुद्रा अस्वाभाविक रूप से क्रोधोत्तेजक हा गई।

इस तज मिजाज की अनदेखी करते हुये सती फिर कहने लगी—"हा! इस कलजुग मे लाग बाग दया धम को भूलते जा रहे है।"

'यह ता तेरा रोज राज का बहाना है।" —बाबा अधीरज से बोला— मैं कुछ भी सुनना नही चाहता, समझी! चाहता हू सिफ भीख!"

इस दो टूक बात को सुन कर सती डर कर पीछे हट गयी। आशका है कही बाबा गुस्से मे उस पर हाथ न छाड बठें। जसी आजकल बाबा की असयत अशात मानसिक स्थिति है उसम यह असम्भव नही लगता।

वह ककश-कण्ठ से फिर चिल्लाया—"तू अब मरे किस काम

की है ? चली जा, कही भी अपना मुह काला कर। मेरा साथ छोड मैं भर पाया तुझ से ।"

साइदास ने अपना ही कपाल दोना हथेलिया से पीट लिया और बडबडाता हुआ वह जल्दी मे कुटिया के अन्दर बन्द हो गया।

× × ×

'चली जाऊ ।' —रात की उन सूनी घडिया मे सती एक विचित्र सी व्यथा मे विक्षुब्ध एव रुधे गले से निरन्तर सिसकती है— 'चली जाऊ पर कहा ?"

एक प्रश्न है जो सारी अन्तश्चेतना को अस्थिर तथा अशात कर जाता है।

समय का अन्तराल ! परिवर्तित परिवेश !

सत्यवती गाव के सभ्रात परिवार की लाजवन्ती कुलवधू। सुन्दर सुशील और कर्त्तव्य निष्ठ। गृह का स्निग्ध दीपालोक। ग्राम्य-जीवन की साक्षात् लक्ष्मी।

लेकिन मन के अन्तराल म एक दुदमनीय चाह है—एक प्रबल आकाक्षा। स्त्री-जीवन की साथकता और सम्पूर्णता के लिये यह नितात आवश्यक है।

कुछ दिना से इस गाव म एक तेजस्वी साधु आया हुआ है, जिसका नाम है साईंदास। सुना है, सबके मन की मुराद पूरी करता है।

वह 'जय भैरव' की आवाज लगा कर भिक्षा मागता है। आयु में है तरुण गौर वर्ण, उच्च मस्तिष्क बलिष्ठ तन, उज्ज्वल मुख

की कांति। कुल मिला कर यौवन की बहार में मद मस्त भवर के समान आकर्षक और प्रभावशाली! दर्शक पहली ही दृष्टि में चकित—सभ्रम! भला इस अवस्था में सासारिक सुखों तथा गृहस्थ जीवन के भोगों के परित्याग का क्या प्रयोजन? —सब के होठों पर सिर्फ एक यही प्रश्न! मोह ममता एव एषणा से सर्वथा मुक्त! आश्चर्य है!

विशेषकर स्त्रियों के समूह में अप्रत्याशित खलबली है। उनके दिलों में असम्भावित हलचल भी है। जब साधु सब की मनोकामना पूर्ण करता है तो यह प्रतिक्रिया सम्भव है! उसके शब्दों में अद्भुत शक्ति है। उसके आशीर्वाद में वरदान का सा गुण है। वह प्रसन्न होता है तो मानो देवता खुश हो गये। देखो, अब भाग्य का सितारा सातवें आसमान पर चमकेगा—ऐसा विश्वास कर सकते हैं।

देवी!'

'हाँ।

'तुम्हारे मन में उजाला नहीं।'

उजाला?'

नारी मुख असहज ढग से अवाक्!

'सन्तान-सुख का उजाला।"

सन्तान सुख!"

सत्यवती की आँखें विस्मय से फटी रह गईं।

साधु थोडी देर के लिये ध्यान मग्न हो गया जैसे वहीं त्रिकाल दर्शी हो। इसके पश्चात् उसके श्मश्रु मण्डित मुख पर लुभावनी आभा प्रस्फुटित हो गई, जिसमें आशा और विश्वास की अकाट्य भावना है।

हैं। अस्फुट स्वर में मुह से कुछ मन्त्रोच्चारण भी करता जा रहा है। पास ही एक बालक का ताजा शव रखा है। एक शराब की बोतल एक तेज धार वाली कटार और कुछ पूजा हवन की सामग्री भी दिखाई दे रही है। पेड़ के तने से बंधा एक बकरा भी खड़ा है शायद उसकी बलि देने की यह सब तयारी है।

तभी त्रसित नारी-कण्ठ हठात् चीख पड़ा। उसके मुह से ये तड़पते हुये शब्द अपने आप निकल पड़े— 'बाबा ! तुमने तो किसी मन्त्र की सिद्धि के लिये ।"

अचानक साइदास का उच्च हास्य ध्वनित होकर मध्य में बाधक बन गया। देर तक वह मर्मांतक हंसी स्त्री के रक्त में लगातार गूंजती रही।

जब बाबा बोलने लगा तो ज्ञात हुआ कि अद्भुत चमक वाली उसकी रक्त वर्ण आंखों की वाणी मुखर हो गई है।

"हां देवी ! मैंने ठीक ही कहा था। इसमें कुछ भी झूठ नहीं।' —एक क्रूर खुशी का आलोक उसके चेहरे पर अनायास फैल गया— 'अमावस्या की आज वह शुभ रात्रि है जब मैं महाभैरवी की विधिपूर्वक पूजा करके बलि चढ़ाऊंगा। उस महामन्त्र का जाप करूंगा, जिसके प्रभाव से बड़े-बड़े भैरव भैरवियें, डाकनियें भूत प्रेत और प्रेतनियें तक प्रसन्न हो जाती हैं। वे अभय का वरदान देकर सभी मनोकामनायें पूर्ण करती है। इससे मुझे चमत्कार पूर्ण सिद्धि का फल मिलेगा ।'

सिद्धि ?'

हां सिद्धि।" साइदास पुनः प्रवाह में कहने लगा—"इसके लिए मैं वर्षों से कठोर परिश्रम कर रहा हूं। जप तप से लेकर मैंने

कई मन्त्र भी सिद्ध कर डाले हैं। मैं वन-वन भटका हूँ और ऊंचे ऊंचे दुर्गम पहाड़ों की मैंने खाक छानी है। बड़े-बड़े महात्माओं से मैंने आशीर्वाद प्राप्त किये हैं।"

बाबा जैसे असीम उत्साह में अब अपने आप में कहने लगा। कुछ पल ठहर कर वह सामने खड़ी स्त्री से आवेग में बोला— 'जानती हो, इसका नतीजा क्या होगा? मैं आकाश में उड़ सकूंगा और पानी पर भी चल सकूंगा। पाताल मुझे नीचे जाने के लिये मार्ग देगा। इसके अलावा अग्नि की ज्वालायें भी मेरे शरीर को जला कर भस्म न कर सकेंगी। प्रकृति का कोप मेरे ऊपर फूलों की तरह बरसेगा। तब मैं मायालोक का दिव्य पुरुष बन जाऊंगा और जो चाहूंगा उसे हासिल करके छोड़ूंगा।'

'क्या?"

सत्यवती के विस्फारित नेत्र तुरन्त माथे पर चढ़ गये।

"हां देवी! मैं सच कह रहा हूं।" —साइलास के होठों पर अकृत्रिम प्रसन्नता की गर्व युक्त मुस्कान खिल उठी— 'आज ही तो वह मंगल घड़ी आ गई है, जिसका मुझे वर्षों से इन्तजार था। बस तुम्हारी थोड़ी सी मदद की जरूरत है। आशा है तुम निराश नहीं करोगी।"

'थोड़ी सी मदद? मैं आपका मतलब नहीं समझी?"

सत्यवती का भय-कातर हृदय इतनी तेजी से धड़का जैसे वह छाती के कठोर आवरण को चीर कर बाहर निकल पड़ेगा। इस कठिन क्षण को सहते हुये उसने तत्काल ही पूछ लिया मगर उसे अपनी आवाज भी कुछ कुछ अविश्वसनीय तथा अपरिचित सी लगी।

बावा ने व्यग्रता से एक लोभी की तरह अपने दोनों हाथ मले। वह जल्दी से अपनी इच्छित वस्तु पा लेना चाहता है। आशंका है कि वह कहीं उसकी गिरफ्त से छूट न जाय। कुछ ऐसा ही भाव उसकी ललचाई आंखों मे साफ साफ झलकने लगा।

हा देवी! तुम्हें थोडी देर के लिये भैरवी का रूप धारण करके मेरे सामने बैठना पडेगा एकदम निश्चल एवं मौन।"

"भैरवी?" —नारी ने जिज्ञासावश पूछा—"वह वह क्या होती है?'

इस प्रश्न के उत्तर में बाबा कहने लगा—'अपने सारे कपडे उतार कर और सिर के बाल बिखेर कर तुम्हें साक्षात् काली माई के सदृश।"

नहीं।"

सत्यवती के कण्ठ से अकस्मात् हृदय विदारक चीख फूट निकली। अक्सर प्रतिकूल परिस्थितियां पाकर मानसिक सन्तुलन विशृंखलित हो जाता है। अत वह पलट कर असहाय और भयभीत हिरनी की तरह भागने लगी। अब उसकी दशा इतनी दयनीय और शोचनीय है कि उसके भागने वाले पांव भी एक तरह से पंगु तथा अपाहिज हो गये। तब पलायन कैसे सम्भव होगा?

इतने में साईंदास बडी बेताबी से गला फाड कर चिल्लाया—''देवी ठहरो! मैं कहता हूँ कि रुक जाओ वरना मेरी वर्षों की साधना धूल मे मिल जायेगी। ठहरो देवी!'

वह फुर्ती से उठा और उसके पीछे पीछे दौडने लगा। थोडी

ही दूर जाकर बाघ ने अपने शिकार को शीघ्र ही दबोच लिया।

× × ×

सच है कि वर्षों का अन्तराल भी इन घटनाओं को विस्मरण करने नहीं देता। लगता है जैसे वे आज भी तरोताजा हैं—कल ही घटी हैं। अतीत की परतों के नीचे जख्म अभी तक हरे हैं। कभी कभी सती स्मृतियों के खण्डहर में भटकने लगती है तो उसे कोई रोकने वाला नहीं मिलता। यह अलग बात है कि वह नितान्त अकेली और निर्मम भाव से निष्प्रयोजन विचरण करती रहती है। उस समय वह होती है और साथ में भूली बिसरी यादें। कभी सुखद अनुभूतियें उसे गुदगुदा जाती हैं और कभी दुस्वप्न सी बुरी यादें आसानी से रुला भी देती हैं। सचमुच में इस अकेलेपन ने तो उसे अनुभूतियों के सहारे जीना सिखाया है।

और उसके बाद?

इस हादसे के तुरन्त बाद सत्यवती को एक अनाम और अवांछित दुर्भाग्य ने चारों तरफ से घेर लिया। अपरिभाषित दुःख तथा असह्य कष्ट से उसका सम्पूर्ण जीवन मानो क्षत विक्षत हो गया। दरअसल-दरअसल गरीबी, अभाव और विपन्नता के अजगर ने उसे पूरी तरह निगल लिया। कहने की जरूरत नहीं कि वह अब सिर्फ बरसी का मजार बन कर रह गई।

इस बीच घर छूटा परिवार छूटा और गांव भी आंखों से सदा के लिये ओझल हो गया। सौभाग्य का सूर्य तो कभी का अस्त हो चुका था, मगर दुर्भाग्य ने तो ऐसी करारी ठोकर मारी कि वह अभी तक सम्भल नहीं पाई और भविष्य में भी सम्भलने की कोई सम्भावना नहीं लगती।

इस पर साइदाम का यह आरोप है कि नागिन बन कर सत्य वती ने उसे अचानक डस लिया। अब तो नस-नस म उसका जहर फल चुका है। मुक्ति कहा ? आखो मे अधियारी सी घिर आती है। साधना का पथ भ्रष्ट हो गया है और उसकी तपस्या पूण रूप से भग हो चुकी है। उसने सिद्धि प्राप्त करने मे बाधा पहुचाई है। इसका परिणाम अब यह रहा कि वे आज दोनो केवल भिखारी है—अन्न के एक एक दाने का माहताज ! दाता की दया दृष्टि के अकिंचन पात्र !

वे वर्षो से दर-दर की ठोकरें खाते हुये इधर उधर भटक रह है। न कही ठौर है और न कही ठिकाना ! बस श्मशान भूमि ही उनका एकमात्र आश्रय-स्थल है। भिक्षा के अन्न से उदर पूर्ति करते हैं।

वसे भी जरूरत से ज्यादा भावुक होना भी हानिकारक है। प्राय ऐसे व्यक्ति नही जानते कि जीवन का सत्य भावना के सत्य से भिन्न है। कभी कभी कोई-कोई न होकर भी जि दगी से इस कदर जुड जाता है अविभाज्य अग की तरह और कभी कोई बहुत कुछ होकर भी कुछ नही बन पाता—जिन्दगी से कटा रह जाता है।

इधर साइदाम का चित्त साधना मे बिल्कुल नही लगता। उसकी कल्पना यथाथ के एक प्रबल थपेडे से छिन भिन्न हो गई। इस कारण वह अस्त व्यस्त और उखडा उखडा सा रहता है। अक्सर रुष्ट होकर वह कहता फिरता है कि एक मायाविनी के इन्द्र-जालिक मोह म पड कर अब सब कुछ नष्ट हो गया है। रह गय है केवल मात्र भिखारी जो मुट्ठी भर अन्न के लिय तरसत हैं।

सती क मुह से दीघ और बोझिल नि श्वास निकल पडी, जसे किसी गहर अवसाद म डूबी हुई ! उसके सग कुछ शब्द कण्ठ

तक आकर घायल पक्षी की तरह छटपटाये और फिर न जाने किस शून्य में जाकर विलीन हो गये।

'सती !"

एक लम्बी चीख सुन कर हठात् वह चौंकी, मूक पीड़ा से बिंधी हुई एक करुण पुकार !

वेदना के इन असह्य क्षणों को सती भली भाँति पहचानती है। निश्चय ही साईदास की छाती में वह पुराना दर्द पुनः टीसने लगा है। वे कई दिनों से उसे टालते आ रहे हैं लापरवाही में। हो सकता है कि वह आज हद से ज्यादा बढ़ गया हो।

"क्या बात है बाबा ?" —कुटिया में आकर सती ने चिन्तित स्वर में पूछ लिया।

"छाती का यह दर्द तो मेरी जान लेकर छोड़ेगा ।'

बाबा एक बार फिर कातर-कण्ठ से कराह उठे।

"मैं अभी तेल गर्म करके लाती हूँ ।'

उद्वेग जन्य फुर्ती से पैर तुरन्त घूम गये।

इस बीच रात का अंधेरा खूब गाढ़ा हो गया। कुप्पी के अधमरे प्रकाश में साईदास का पीले सूखे पत्ते-सा चेहरा एकदम लटक गया। निस्तब्ध वातावरण में जैसे निर्जीवता पूरी तरह भर आई। मृत्यु का अनुभव क्या इस यंत्रणा से भी भयंकर होता है ?

गर्म तेल में कोई दवा मिला कर सती घनी देर तक मालिश करती रही। उसकी सेवा से बाबा को निश्चित रूप से आराम मिलता है।

' अब कैसी तबीयत है, बाबा ?"

कुछ ठीक है ।" —अपनी हकलाहट पर मुश्किल से काबू पाते हुये साइदास ने जवाब दिया।

' तब अच्छा है ।'

आश्वस्त हो सती बडी लगन से उंगलियें चलाने लगी मानो उनम नई जान सी आ गई है।

साईदास मार्मिक दृष्टि से उसे अपलक निहार जा रहा है। जसे सती आज बिल्कुल बदल गई है—या फिर उसकी अपनी दृष्टि ! उसके चेहरे पर स्पष्ट सा व्याकुल भाव आ जाता है। माथे पर बारीक और घना शिकनें अनायास उभरती हैं मानो वे कोई खतरनाक जाल बुन रही हो।

तभी बाबा के नेत्र सजल हो गये।

' क्यो बाबा क्या हुआ ? ' सती ने घबरा कर सदिग्ध हृदय से पूछ लिया।

मरझाये हुये चेहरे पर विषाद की एक परत और चढ गई। कुछ शिकनें उभरी और परस्पर उलझ गइ।

'सती ! बसन्त म आज मेरे अपराध मेरी आखो के सामने साकार रूप म खडे हैं। मेरे पाप मुझे रौरव नरक म धकेल रहे है। सच, मैंने एक भले घर की सुखी जिन्दगी को कुछ आडम्बरो के पीछे बर्बाद कर दिया।'

सती बाबा के पश्चात्ताप से भरे इस कथन का अर्थ बिल्कुल समझती नही हो ऐसी बात नही। फिर भी अनजान बन कर और अपने भीतर के आवेग को रोक कर वह बोली—"मैं समझी नही।"

साईंदास के होठों पर एक क्षीण-सी मुस्कान चमकी जिसकी तेज धार किसी के भी संवेदनशील हृदय को छील सकती है।

उसने भरे हुये गले से कहना चाहा— 'मैंने तेरे साथ बहुत अन्याय और अत्याचार किये हैं पर तू इन सबके बदले में ।''

स्वर बीच ही में टूट कर बिखर गया। इससे वे आगे कुछ बोल न सके।

सती निश्चिन्त भाव से प्रतिक्रिया विहीन सी बन कर चुप बैठी रही। खूब जानती है कि आजकल बाबा जब तब इस प्रसंग को बड़े खेद और ग्लानि से दोहराते रहते हैं। शायद मन में कोई फांस गड़ी हुई है जो उन्हें समय-असमय पर कचोटती रहती है। अपने अपराध का यह तीखा दंश उन्हें अब चैन से बैठने नहीं देता— यह स्पष्ट है।

'बाबा! आप इस तरह दिल छोटा क्यों करते हैं?' —सती स्नेह विह्वल कण्ठ से कहती है— जो कुछ बीत गया, उस पर किसी का वश नहीं था। उसे अब लौटाया भी नहीं जा सकता। फिर दुःख-सुख और न्याय-अन्याय तो इस नश्वर शरीर के साथ जन्म से ही लगे रहते हैं। उसकी चिन्ता कैसी? आप ही तो कहा करते हैं कि यह शरीर मिट्टी का कच्चा कुम्भ है एक दिन वापस मिट्टी में मिल जायगा। तब इसका अंधा मोह कैसा? इसके प्रति आकर्षण और लगाव कैसा?''

सुन कर साईंदास एकाएक खामोश हो गया। ज्ञान की ज्योति आलोकित सती के चक्षुओं में झांक कर वह बाद में शुष्क कण्ठ से बोला— 'तो फिर मुझे यह अन्तर्वेदना क्यों जलाती है?'

—

सती के होठा के आगे सहसा मौत की भारी भरकम शिला आकर खडी हो गई। अब ?

× × ×

अगली सुबह सती ने अपना वही लम्बा बास फिर से सम्भाला और मरघट की ओर चल पडी। सुना है कि आज भी कोई मुर्दा जलने के लिये आया हुआ है। उसे तो बुझे हुये कोयले और अधजली लकडियाँ मुफ्त मे चाहिये, जो सिर्फ चिता से ही मिल सकती हैं।

•

आखो का जहर

इस पार्टी के पीछे अरविंद का इरादा क्या है—सुरेखा एकाएक समझ न सकी। अब अगर वह अपनी मरजी चला कर मना कर देती है तो यह बिल्कुल ठीक नही होगा। इससे शायद कही भीतर बेहद तकलीफ होगी, अत वह कहते ही मान गई।

वैसे सुरेखा अपनी प्रकृति और स्वभाव के बारे में खूब अच्छी तरह जानती है। वह इतनी अनासक्त नही है एकदम वीतरागी भी वह कभी नही रही। प्रत्यक्ष अनुकूल या विपरीत परिस्थितिया के साथ उसने समझौता करना सीखा है इस कारण नये बनने वाले भावात्मक सबधो का उसने जी खोल कर स्वागत किया है। आज के बदलते सदर्भ म यह नितात स्वाभाविक है। वह पहले वाला रुढिवादी

परम्पराओ का अनुदार और असहिष्णु युग अब नही रहा, जब स्त्री घर की केवल शोभा समझी जाती थी। उस समय पराये पुरुष का मुह देखना भी पाप था, किन्तु अब पाप पुण्य की वह दकियानूसी परिभाषा पूरी तरह बदल गई है। यू भी परिवेश और परिस्थिति के दबाव के कारण कही न कही सलग्न होना ही पडता है वरना सब ग्रासिनी हताशा कभी का निगल न जाय !

पिछले कई मास से सुरखा का सबध अरविंद से घनिष्ठ एव मधुर है ! वह एक सवेदनशील कलाकार है—एक कुशल व्यावसायिक फोटोग्राफर ! फोटो खीच कर वह किसी न किसी व्यावसायिक पत्रिका म प्रकाशनार्थ भेजता है। इसके अलावा कई विज्ञापन करने वाली एजेंसिया भी इससे स्नप मगवाती रहती हैं। उस फोटो या स्नप को आधार बना कर व कम्पनिया की वस्तुओ का सुरुचिपूर्ण विज्ञापन करती हैं। इसमे अच्छी आमदनी हो जाती है। इस धन्धे म उसने खूब यश भी कमाया है। पैसा बनाने के साथ साथ चारो तरफ अच्छी प्रसिद्धि ! तब क्या चाहिये ?

सुरखा इस काय म उसकी सहयोगिनी है। नया-नया काम जरूर है पर उबाने और थकाने वाला नही। उसने अपनी दिली इच्छा और शौक से साथ देना स्वीकार किया है। इसके लिये कोई पूर्वाग्रह उसके मन म आया तक नही रहा। अभी तक किसी प्रकार की मर्यादा हीन अडचन उसके माग म नही आई—सौभाग्य की बात है !

जब इस पार्टी का प्रस्ताव अरविन्द ने सहसा उसके सम्मुख रखा तो सुरखा के मन हव मिश्रित विस्मय से फैल गये। अपने को यथा सम्भव सयत करते हुये उसने औपचारिक बनने का प्रयत्न किया।

"कब ?"

"आज शाम को।"

अच्छा।"

' मैं तुम्हें साढे सात बजे लेने आऊगा। तैयार रहना।"

लेकिन तभी सुरेरा को कोई घरलू बात य द हो आई—"पर आज तो मैं व्यस्त ।'

'क्या ?"

'पार्टी फिर कभी नही हो सकती ?"

सुरेखा के इस प्रश्न पर अरविंद ने नकारात्मक ढग से सिर हिलाया—' बिल्कुल नही।"

इस दृढ स्वर से सुरखा किंचित् सोच मे पड गई। परन्तु उसके चेहरे पर आने वाले भावो से स्पष्ट है कि उसका मना करने का विचार अब शिथिल सा हो रहा है। वह चाह कर भी जैसे इस अनुरोध की अवना नही कर सकती। आज इस प्रीतिकर आग्रह को टालना असम्भव है।

'तुम चुप क्यो हो रेखा ?' मानो प्यार स अरविंद न पूछ लिया—' क्या सोचने लगी ?"

'वैसे कुछ भी नही।"

इस उत्तर के साथ ही सुरेखा के मुह से निमल हसी की बौछार बरबस बरस पडी। अपनी हसी समट कर वह फिर बोली—' अच्छा ,चल आना।"

"गुड ।"

× × ×

आज बहुत दिनो के बाद सुरखा ने अपनी मनचाही नायलेक्स

की प्रिंटेड साड़ी पहनी है बहुत ही बढ़िया—उसके विचार से बहुत ही उत्तम! बड़े मनोयोग से अपने चौड़े ललाट पर उसने लिपिस्टिक की लाल बिंदी भी लगाई है। फिर कसे हुए जूड़े का ख्याल कर उसने अपनी घुंघराली लटों की ढीली चोटी बनाई। यूं उसे सादा चेहरा और भोली भाली आंखें सदा से मोहक लगती हैं। नाहक का सजाना और चिकना बनाना उसे बिल्कुल नहीं भाता। फेस पाउडर और क्रीम मलना भी उसे पसंद नहीं। यह एक तरह की ज्यादती है। उसकी मान्यता है कि जब ईश्वर ने खूबसूरत चांद सा रोशन चेहरा दिया है तो उसे कृत्रिम उपकरणों से रंगने में क्या तुक? —उसे तो चिढ़ सी होती है।

साड़ी की सलवटों पर हल्का हल्का हाथ फेर कर उसने एक बार फिर अपना मुख दर्पण में जरा गौर से निहारा। उसे तो कहीं पर भी कमी नजर नहीं आई। वह खिले गुलाब की तरह लुभावना और मन भावन प्रतीत हुआ।

निर्दिष्ट स्थान पर आकर उसे अधिक देर प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। सहसा एक टैक्सी उसके पास आकर रुकी। पिछली सीट पर अरविंद बैठा था। गेट खोलते हुये उसने स्नेह पूर्ण अनुरोध के साथ कहा— 'बैठ जाओ।'

एक पल के लिए वह नारी सुलभ संकोच से तनिक अस्थिर हो गई। तब जैसे उपालम्भ का यह अटपटा और असंगत सा स्वर अचानक यह कहते हुए मुंह से निकल पड़ा—'इतनी देर कैसे लगा दी? मैं कब से इंतजार कर रही हूं।'

किंचित् आश्चर्य व्यक्त करते हुए अति नाटकीय अन्दाज में अरविंद एकदम हंस पड़ा। तुरंत सहज भाव से बोला—'ऐसे ही देर हो गई।'

ऐसी स्थिति मे सुरेखा का वह स्वर कितना उपयुक्त और प्रासगिक निकला—यह जान कर वह मन ही मन पुलकित हो उठी। बहुत ही नजाकत से पैर उठाती हुई वह टक्सी के अन्दर अरविंद की बगल मे आ बैठी।

टैक्सी फौरन चल पडी।

× × ×

शहर के एक अच्छे होटल मे अरविंद के साथ प्रवेश करते हुय सुरेखा न तनिक विस्मित नेत्रो से अपने आसपास की चहल-पहल देखी। फिर पूछ बठी—' क्या यही पर पार्टी का आयोजन ह ?"

"बिल्कुल।"

"और भी कई आपके दोस्त उसमे शरीक होग ?"

इस बार कुछ हिचकते हुय सुरेखा न पूछ लिया पर इसके उत्तर मे अरविंद ने गदन हिला दी।

"नही।"

घडी भर के लिये सुरखा चुप सी रही, जाने क्या सोचती हुई। इस बीच शिशु-सुलभ मुस्कान के साथ अरविंद ने फिर कहा—तुमन पूछा नही—क्यो ?"

कोई उत्तर नही आया। चेहरे पर जिज्ञासा का भाव बना रहा। तनिक ठहर कर अरविंद न स्पष्टीकरण देना चाहा— इस लिये कि मेरी पार्टनर तुम सिर्फ एक अकेली हो। मैं दूसर को क्या बुलाऊ ?"

पता नही क्यों तो ध्वनि सुरसा के मुह से अकस्मात् निकल पड़ी। उसने आभास दिया कि मानो दिल पर से एक बोझ-सा उतर गया है। वह अब आश्वस्त है—द्वन्द्व रहित है।

'चलो।'

कह कर अरविंद ने उसका हाथ बड़ी आत्मीयता से थाम लिया। वह हठात् चौंकी—तनिक झिझकी भी फिर कुछ निश्चय-सा करके उसके साथ सटकर चलने लगी। उसने सिर को झटका देकर व्यर्थ की दुविधा के समस्त बंधन तोड़ डाले। इससे अनावश्यक दूरी की भावना भी अपने आप खत्म हो जाय ताकि मन में कोई उचाट बाकी नहीं रहे।

ऊपर कमरे तक पहुँचते पहुँचते सुरसा सहज भाव से अनुसार वर्जनाओं की कुण्ठाओं को बहुत कुछ विस्मरण कर गई। बस अरविंद की बातों में कुछ ऐसा वशीकरण था कि वह मोहासक्त हुए बिना नहीं रही—अदृश्य डोर में बंधी उसके साथ साथ खिंचती चली गई। बहुधा अपेक्षित और वांछित पुरुष स्पर्श का सुख भी निराला होता है, इसके प्रति प्रलोभन और लालसा को रोक पाना जरा मुश्किल है। उस समय फिर किसी लोक लाज अथवा झूठी मर्यादाओं का कोई भय नहीं रहता।

क्या पियोगी ?"

इस प्रश्न को सुन कर सुरसा सर्वप्रथम थोड़ी सकपकाई। इसके पश्चात् निर्विकार स्वर में उसने कहा—' सिर्फ कोक ।'

' बस।'

अरविंद तभी हल्के-से हंस पड़ा।

अपने लिए उसने ह्विस्की की आधी बोतल मंगवाई। उसमें

सोडा और बर्फ के टुकड़े डाल कर एक पेग बनाते हुये वह आवेश मे बोला—' देखो रेखा, आज मुझे माफ कर देना। तुम्हारे सामने पीने की हिम्मत जो कर रहा हू ।'

" मुझे कोई एतराज नही।"

सहज स्वाभाविक कण्ठ से कह कर सुरेखा ने बाक की बोतल उठाई और बिना बर्फ व गिलास के एक लम्बा घूट लेकर अपने होठो को वह अपनी उगली से पोछने लगी। बोतल के झाग जैसे किसी अपरिचित उन्माद की सूचना दे रहे है।

बड उत्साह से अरविंद ने भी वह पूरा पेग एक घूट मे ही समाप्त कर दिया। शीघ्र ही उसकी आखो मे हल्का हल्का सरूर जागा, बाद मे उस पर आश्चर्यजनक प्रतिक्रिया हुई। वह अकारण ही छोटी से छोटी बात पर हसने लगा—खिलखिलाने लगा। पता नही कब का प्रसुप्त उल्लास आज मानो बरसाती झरने के समान कल-कल निनाद करके फूट पडा।

जब उसने एक साथ तीन चार पेग चढा लिये तो उसकी आखो के लाल डोरे तन गये। उसकी गहराई भाषाहीन होते हुये भी अब मूक अथवा अर्थशून्य नही लगती। अपने मन के भावो को सही ढग से अभिव्यक्त करने की उनमे अद्भुत क्षमता आ गई है।

नशे की यह अवस्था वसे तो भयप्रद है—अनेकानेक सशय और शकाओ को उत्पन्न करती है, मगर सुरखा को अब भी विश्वास है कि अरविंद उसकी स्वभावगत कोमलता और सहनशीलता का कोई अनुचित लाभ इस एकान्त म कदापि नही उठायगा। इस अवधि मे जहा तक वह उसे समझ पाई है उसमे ऐसा चरित्र दोष नही। नैतिक मूल्यो को वह जीवन म सर्वोपरि मानता है।

वह बठी-बठी यही सब सोच रही थी कि अचानक अरविंद

अपनी जगह से उठा और उसकी बगल मे आकर बैठ गया। बिना किसी सकोच के वह धीरे धीरे प्यार से उसके घुघराले बालो को सहलाने लगा। उस वक्त कैसा तो अच्छा लगा था उसके मन को— एकदम जैसे सुखद अनुभूतियो से परिपूर्ण।

ऐसे समय जब पराये पुरुष का कपटपूर्ण और छलनापूर्ण स्पर्श अगारो के स दश दग्ध कर जाता है, तब मन अपनी धुरी पर अडिग नही रह पाता। वह ज्वालामुखी बन कर सवनाश की आग उगलने लगता है। किन्तु आश्चय ! आज कुछ भी नही हुआ। उत्तेजना का कोई भी भाव उसकी चेतना को सतप्त नही कर गया। मानो वह सहज रूप म सब सह गई।

चाहत भरे अन्दाज म उसकी चिबुक छूकर अरविंद ने मुह ऊचा किया। भाव मुग्ध निगाह उस पर कुछ खोजने लगी, तत्पश्चात उसके हृदय से ये मार्मिक उच्छ्वास अपने आप निकल पड—' खूब बहुत खूब ! औसत स बडा यह गोल सिर, वास्तव म वर्मी ब्यूटी की याद दिलाता है। यू भी आगे से पिचका माथा, भारी भारी उनीदी पलको के ऊपर ये लम्बी और पतली भौह। इस गोल गोरे चेहरे पर य सीप सी नशीली आखें मानो रूप के सागर मे तरते दो कमल ! पहचानने वाले तो पहचान जाते हैं। वसे हीरे की कदर जौहरी ।"

शायराना अन्दाज म कह कर अरविंद ने किसी व्यावसायिक पत्रिका का फाडा हुआ एक चिकना पृष्ठ निकाला जिसमे एक सुन्दर लडकी की आधी तस्वीर के साथ मन मोहक काजल का विज्ञापन था।

भाव विभोर मुद्रा से चौंक कर जब सुरेखा ने ध्यान से देखा तो उसके आश्चय का ठिकाना नही रहा। हकीकत में यह उसकी अपनी तस्वीर थी बहुत ही आकषक और एक अल्हड किशोरी की-सी मोहकता लिये हुये ! अभी पिछले दिनो अरविंद ने जो नये स्नैप लिये

थे, उनमे से वह भा एक था। विज्ञापन एजेंसी वाला ने काजल के लिये बिल्कुल नये ग से उसका बहुत ही अच्छा उपयोग किया था। तस्वीर मे उसकी अविस्मरणीय भगिमा देख कर पाठक और दशक की दृष्टि आप से आप काजल के विज्ञापन पर ठहर जाती थी। काफी दर तक बगैर दखे या पढे वह हट नही पाती थी।

'समभी कुछ !''

प्रसन्न भाव से अरविंद ने कहा तो सुरेखा ने बड भालेपन से अपनी अभिज्ञता सिर हिला कर प्रकट कर दी।

"हद हा गई।" —माहिनी मुस्कान के बीच अरविंद फिर कहवा—' यह तुम्हार खूबमूरत चेहर और नशीली आखो का कमाल है।'

यह कथन किसी सीमा तक मच है सुरेखा यह भली भाति समभती है।

तभी अरविंद ने अपनी जेब से नोटो की गड्डी निकाली और अतिरिक्त प्रसन्नता से उसे सुरखा की हथेनी पर रख दी।

'ला।' —वह फिर उसी मन स्थिति मे बोलन नगा— "मैंने तुम्हें इस फोटो के लिये सौ रुपये दन का वादा किया था पर एजेंसी वाना ने इस विज्ञापन का लगभग एक हजार रुपया भेजा है— आधा तुम्हारा और आधा मरा ।"

' ओह, यह बात है ।"

सुरेखा ने प्रफुल्लित मन से कुछ विस्मय प्रकट किया साथ ही वह अपन भीतर विचित्र सी गुदगुदी महसूस करने लगी।

' लगता है, काजल का विज्ञापन मार्केट म खूब धाक जमा गया ।"

एक और पेग समाप्त करके जस अरविंद कोई दूसरा मनुष्य वन गया। वह एक मुक्त प्राणी है। कोई वधन नही—परिंदे की तरह एकदम चिन्ता रहित। बस आकाश की गहराइया म खूब जा भर कर उडानें भरते चलो। वह एक भावुक के समान सरखा के रूप को एक नई दृष्टि से नखता है मानो उसके मन म स्वाभाविक सौंदय बोध हठात् जाग्रत हो गया है। यह गोरा रग छोटा सा ठिगना कद मस्ती भरी चाल सगीत का सा मधुर कण्ठ स्वर दिल को महज ही मे स्पश कर जाता है। विधाता ने बडे मनोयोग से रची है एक स्वप्न सु दरी।

वह जसे सुध बुध खोकर बिना काजल की कजरारी आखो को एकटक निहारता रहा तब किसी आकस्मिक भावावेश म उसने चुपके स अपने तप्त होठ उन रसीले अधर पल्लव पर रख दिये।

सुरेखा इससे बिल्कुल विचलित नही हुई। बडी निश्चिन्तता से जाने कब वह समर्पित सी हो उठी। उसके व्यवहार म अब भी कोई जडता नही है केवल भाव विभोरता।

अरविंद न जब मुख ऊचा करके उसकी ठोडी के दाहिने तरफ के तिल को चूमना चाहा तो अनात आवेग से समस्त वदन झनझना उठा। उसके कपकपाते अधर गम गम आहे छोडते हुये नम नाजुक होठो को टटोलने लगे तो सुरेखा स्वय को जब्त करके न रख सकी। वह एक तरह से सूखे पत्ते के समान कापने लगी।

कुछ दर म दोनों अपने वतमान अस्तित्व को भूल कर एक भिन्न ससार म खो गये। एसा प्रतीत हुआ कि व फूल से भी हल्के बन कर अन्तरिक्ष की सीमातीत गहराइया म उड जा रहे हैं जहा कोइ कण्टकर अवरोध नही।

उन्माद की इस स्थिति मे अकस्मात् व्यवधान पडा, जब अरविंद

तनिक सम्भल कर धीरे से फुसफुसाया—"रत्ना ! '

"हां ।"

एक नशीली आवाज, एक मादक स्वर !

"एजेंसी वाल ने मेरे पास एक प्रस्ताव भेजा है ।"

" क्या ?"

कुछ क्षणों का असह्य मौन ! तब फिर फुसफुसाहट हुई—"कुछ बात नहीं। किस तरह का प्रस्ताव ?"

उनीदी आखें खोल कर मुह मे उत्तर आया—' वे किसी विज्ञापन के लिये तुम्हारे शरीर की सिर्फ चड्डी मे कई तस्वीरें चाहते हैं। उसमे ऊपर का हिस्सा लगभग नगा ही नजर आये। चाहो तो झीना सा आवरण सीने पर ! बस, तुम्हारे नशीले जिस्म के पोज़र ।"

' हैं हैं ।"

"हां।" —मदभरी आवाज की वह फुसफुसाहट अचानक एक गहरा अथ द गई— 'शायद वे तुम्हारे यौवन पूर्ण बदन और गदराये ।'

पीठ को सहलाता हुआ उद्दण्ड हाथ सहसा छाती पर आ गया। इसमे मर्यादा का अतिक्रमण होने की सम्भावना पैदा हो गई। यद्यपि यह पाशविक वासना का ऐसा आरम्भिक रूप है, जिसे भ्रमवश ही सहन करना अत्य त कठिन है।

पता नहीं कैसे छाती म प्राणान्तक आक्रान्त सर्प की तरह कुण्डली मार कर बैठ गया। इस जाग्रत अवस्था म उसने होठों को बस कर रोकना चाहा। परन्तु मोह भंग की इस स्थिति मे कण्ठ के अन्दर घुमड कर रहने वाला वह प्रचण्ड ज्वार होठों की चहारदीवारी से जा टकराया, फिर वह प्रलय का रूप धारण करके बरस पडा। ,

आसो,

"नही नही।' सुरेखा प्रखर कण्ठ से चिल्लाई— मैं यह अनथ कभी नही करन दूगी। जिस्म की यह नुमाइश इसानियत और सभ्यता के नाम पर कलक है । मैं इसकी हरगिज इजाजत नही दूगी नहीं दूगी।

अपमान और क्षोभ से उसका चेहरा एकदम लाल हो गया। अब यह कोई दूसरी सुरेखा है—आश्चय जनक ढग से बिल्कुल बदली हुई सी!

अरविंद इस बदले हुये तेवर को देख कर अपन आप सिटपटा गया। उसन स्थिति को सम्भालन का प्रयास किया, पर इसस पहले ही बड वग से गाज गिर पडी।

'नही यह दुराचार है।" —बेहद वितष्णा की सी मुद्रा बना कर सुरेखा पुन दृढ स्वर म बोली— लालसा और लोभ आज की जागरूक नारी को ठग नहीं सकते यह याद रह ! भीतर की अतृप्त और विकृत वासना का यह ऐसा भयानक उन्माद है जो उसे नीचे गिराता है—भ्रष्ट करता है ।'

अविश्वसनीय आखो से टपकता जहर क्रोधित मुह स बरसता कहर देख कर अरविंद को अप्रत्याशित धक्का लगा। नि स देह उसे अब तुरत उनकी स्तम्भित और सुन कर देने की अपूव क्षमता का तीखा आभास भी हुआ। प्रतिक्रिया स्वरूप उसके मुह से हल्की सी आवाज निकली—एकदम निष्क्रिय और गूज हीन ! उसके ठण्डे शब्द निर्जीव सो पड गई जीभ पर फिसल कर रह गये। तब उन मार्क क्षणो मे एक आदिम युगीन पशु जो उसके मन के गहन वन म से बाहर आकर अपने आखेट को ओर भूखी निगाहो से ताक रहा था, एकदम मानो धराशायी हो गया। उसकी पाशविकता जाने किस तिलस्म के प्रभाव म अचानक नष्ट हो गई।

लगता है कि सुरसा का दिल अन्दर से बिल्कुल रेगिस्तान है, अत आसानी से नही पसीजता। उसके चेहरे, बदन और हाव भाव से इस समय केवल घृणा एव विरक्ति का एहसास हो रहा है। बस एक झटके के साथ वह उठी और साडी के आचल को सम्भाल कर बिना कुछ कहे द्वार की दिशा मे चल पडी।

इससे पहले अरविंद कुछ सावधान होकर उसे पुकारे हाथ से अचानक गिलास छिटक गया और ढेर सारी शराब उसके कपडो को खराब कर गई।

"आफ !"

सुबह की धूप

•

•

और यह नई ट्यूशन !

विश्वास नही होता कि यह नई मुसीबत मिसेज वर्मा के प्रबल आग्रह का परिणाम है। कालेज म वे उसके साथ एक प्रतिष्ठित लेक्चरार हैं। फिर पढान का सवाल रह गया है उनके खुद के भाई का। अब मना भी कर तो कसे? उनका शिष्टता से भरा आग्रह अनुरोध कुछ एसा प्रभावशाली है जिसकी अवना इस समय कठिन है।

पता नही किस प्रेरणा के वशीभूत हो मिस तवर न पढाना स्वीकार कर लिया बावजूद इसके कि उसे पढाने का कोई विशेष उल्लेखनीय एव महत्त्वपूण अनुभव नही है। शायद इस भावना के कारण कि जीवन मे कुछ काम ऐसे होते है जो परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप मे अपने आप

या पाचवी कक्षा भी आगे बहुत हुआ तो छठी-सातवी कक्षा का साधारण लडका होगा। इसम बड लडके की उसे कतई उम्मीद नही थी।

इधर लडके को इस विषय म कोई सूचना नही थी। महिला टीचर के नाम से ही उसे बहुद चिढ थी। सुनते ही बिदक जाता था। इसका डर उसकी बडी बहिन को भी था। कही उसका छोटा लाडला भाई जानबूझ कर कोई गडबड न कर द। यही आशका उसके बहनाई गोपाल वर्मा को भी परशान किये हुए थी। वसे महिला टीचर वाली बात उन्ह भी पस द नही आई। कि तु पत्नी के हठ के सम्मुख उन्ह भी झुकना पडा।

मेरे कालेज की जानी पहचानी लेक्चरार हैं। विशेषकर अग्रेजी बहुत ही अच्छा पढाती हैं।"

मैं तो इसलिय कह रहा था कि बडी उम्र का किशोर लडका है शायद साथ ठीक से नही निभे।"

'वह कोई भेडिया तो है नही जो फाड खायेगी।' —पत्नी के गल म यह प्रतिवाद का स्वर हल्के से गुस्से के रूप म फूट पडा— जमाना बहुत बदल गया है और तुम हो जो अभी तक पीछे की धरती देखते फिर रहे हो।

वर्मा ने अब बिल्कुल चुप्पी साध ली। इसी म भलाई है व जल्दी ही समझ गये। अपनी लेक्चरार पत्नी की बात काटने की उनमे कतई हिम्मत नहीं है। इसके अलावा व भी किसी हद तक नये विचारो के व्यक्ति है अत आधुनिक आचार विचार से उनका कोई सीधा विरोध भी नही है।

× × ×

'जीजाजी!"

सतीश की तेज आवाज से एक बार तो जैसे पूरा कमरा हिल गया। वह उनके कमरे में तेज कदमों से चल कर आया और बरस पड़ा। वर्मा जी को इस बिन बादल बरसात का पहले से ही सन्देह था। उन्होंने ध्यान से अच्छी तरह देख लिया कि लड़के की आवाज में मधुरता के स्थान पर तीखी झुंझलाहट है।

बिना किसी संकोच के उन्होंने अपनी विवशता प्रकट कर दी।

'मैं क्या करूं? तुम्हारी जीजी ने सब कुछ तय किया है।"

जीजी ने तय किया है।'—क्षोभ से थोड़ी देर चुप रह कर वह सरोष गरजा—"तो आप उसे फौरन चले जाने को कह दीजिये। मैं उससे हरगिज नहीं पढ़ूंगा।'

अब वर्मा जी की व्यवहार कुशल बुद्धि अचानक सक्रिय हो गई। जहां तक काम न दे वहां युक्ति से काम लेना अधिक लाभदायक है। वे इस तथ्य से भलीभांति अवगत हैं। वे समझाने के उद्देश्य से बोले— जरा धीरे बोलो वह सुन लेगी। जब वह चल कर अपने घर आ गई है तो फिर दो चार दिन उसके सामने जाकर बैठ जाओ। बाद में अपनी जीजी से कह देना कि उसे पढ़ाना नहीं आता—बस।"

"तो ठीक है।"

वह धड़धड़ाता हुआ आंधी वेग से बाहर निकल गया। उसके चेहरे पर विरक्ति का जो भाव है वह अभी गया नहीं। वह अन्तर्ग्लानि को दबाकर सोचता है कि अगर पढ़ने लिखने में उसका मन नहीं लगता तो वह क्या करे? अपनी तरफ से वह खूब मेहनत करता है फिर भी अंग्रेजी में फेल हो जाता है। पहले जो टीचर पढ़ाने आते थे वे भी जड़ बुद्धि थे। वह अंग्रेजी में कमजोर है तो वे उसे हिस्ट्री पढ़ाने की कोशिश करते। न तो उनका उच्चारण ही ठीक होता और न उनमें पढ़ाने का ढंग मालूम। वह

जल्दी ही उनसे उक्ता जाता। औजी भी नाराज होकर उनकी फौरन छुट्टी कर देती। जाने कितने टीचर इस बीच आये और चले गये, कुछ याद नहीं। अब महिला-टीचर का नम्बर है। देखें, कितने दिन टिकती है।

यद्यपि सतीश के दिल में तीव्र उत्तेजना और उद्वेलन है, तथापि कमरे में आते-आते वह आधी पता नहीं कैसे खत्म हो गई। पर जैसे बहुत भारी हो गये। उसने नीची नजरों से अपनी टीचर की सौम्य आकृति अच्छी तरह देख ली। फिर धीरे से कुर्सी खींचकर वह सामने बैठ गया।

नीलम भी अकेले में बैठे-बैठे ऊब गई। हाथ की पत्रिका मेज पर रखकर उसने पूछा—"तुम्हारा भाई कहां है?"

"जी मेरा भाई?"—लड़का हठात् चौंका। इसी विस्मय के बीच वह बोला—'क्या मतलब?"

जवाब में मिस तवर हल्के से हंस पड़ी।

"मतलब की भी तुमने खूब पूछी। अरे भई मैं तुम्हारे छोटे भाई को पढ़ाने आई हूं।

सुनते-सुनते लड़के का चेहरा एकदम कस गया। उसने निर्मम कण्ठ से कहा— जी नहीं। मैं ही पढ़ूंगा।'

"क्या?

नीलम के नेत्र आश्चर्य से विस्फारित हो गये।

"यानी कि तुम मुझ से पढ़ोगे?

"जी, हां।"—सतीश का पारा अनचाहे चढ़ने लगा। उसने बरखी से कहना आरम्भ किया— 'आप ध्यान से सुन लीजिये। मुझे अंग्रेजी बिल्कुल नहीं आती। असल में इस विदेशी भाषा को पढ़ते हुए मुझे बुरी तरह कोफ्त होती है। इस बार भी फेल होना लगभग निश्चित है। ऐसे में अगर आपने मुझे पढ़ाया और पास नहीं हुआ तो सारा दोष आपके ऊपर

आयेगा। अब आप सोच लीजिये कि इस सूरत में आप मुझे पढ़ायेंगी या नहीं।"

मिस तवर का चेहरा फक होकर लटक गया। डूबती हुई आवाज में वह धीरे से बोली—'शारदा देवी ने तो ऐसा कुछ भी नहीं कहा था।"

'वे भला क्या कहने लगीं।' लड़का उसे खिन्न और दुविधा में जानकर अधिक वाचाल हो गया— 'वे तो जानते समझते हुए भी बिल्कुल अनजान बन जाती हैं। अपनी आदत से मजबूर हैं।"

नीलम चुप!

एक तो वह इस विकट परिस्थिति के लिए बिल्कुल तैयार नहीं थी। उस पर यह निराली बात!

परन्तु थोड़ी देर सोचते सोचते उसके अधरों पर अचानक स्नेह पूर्ण मुस्कान खिल उठी। उसमें पराभव की दुर्बलता नहीं बल्कि आत्म विश्वास की तेजस्वी भावना है। अब उसने सहज ही में अनुमान लगा लिया कि लड़का जानबूझ कर उससे पढ़ने के लिए राजी नहीं है। निश्चय ही वह किसी पूर्वाग्रह से पीड़ित है। उसकी बातों से इस धारणा की पुष्टि होती है। यद्यपि उसकी जिद अपनी जगह है मगर उसमें से जो चुनौती भरा स्वर निकल रहा है वह नीलम को कुछ और सोचने को प्रेरित करता है। वह तो उठकर कभी की चली भी जाती, यदि मिसेज शारदा देवी का जरा भी लिहाज नहीं होता। अब उसके दिल में एक उत्कण्ठा-सी जाग्रत हो गई। लड़के की बातें सुनकर उसके प्रति असाधारण दिलचस्पी बढ़ गई। देर तक वह उसकी ओर गहरी निगाहों से देखती रही, फिर अविचल दृढ़ता से बोली—'अब मैंने फैसला कर लिया है कि तुम्हें मैं जरूर पढ़ाऊंगी। जो कुछ भी परिणाम निकलेगा, उसे मैं भुगत लूंगी।"

'जी ।"

सतीश अवाक रह गया। इसके साथ भीतर का अशान्त भाव चेहरे पर अपने आप बिखर गया।

× × ×

दो एक दिन बीतते न बीतते मिसेज वर्मा की धारणा किसी सीमा तक बदल गई।

हुआ यह कि वे बगल वाले कमरे से लगातार देख रही हैं। लड़के की यह ध्यान मग्न मूर्ति उन्हें भली लगती है। यह तो अच्छा है कि सतीश बिना किसी आना कानी के ही अपने आप ठीक समय पर पुस्तक खोलकर पढ़ने बैठ जाता है। उन्हें आश्चर्य तो तब हुआ जब विद्यार्थी अपनी टीचर की बातों पर ध्यान न देकर आड़ी तिरछी रेखाओं से युक्त कोमल हथेलियों की सुन्दरता को अपलक निहारता है। किसी वाक्य का अर्थ न समझकर वह उसके चेहरे की तरह विस्मय से देखता है। लगता है जैसे रूप की तलैया के पास कोई कमल खिलने वाला है।

यह तो स्वाभाविक नियम है कि अगर कोई किसी से स्नेह करता है उसके प्रति अनुरक्त होना गलत नहीं है। धीरे धीरे उसकी भावनायें अनुराग मुखी बन जाती हैं इस सन्दर्भ में यह परिवर्तन आश्चर्य जनक है कुछ कुछ आशा के विपरीत भी। अब बाहर की वस्तुओं के प्रति सतीश का आकर्षण और लगाव कम होने लगा है मानो कोई भी राग उसे घेरता नहीं। उसका सारा ध्यान और प्रवृत्ति जैसे बाहर से हटकर अपनी टीचर के आस पास केन्द्रित है। सारी पढ़ाई, विद्या तथा रुचि बोध बस नीलम के चारों तरफ सिमटकर रह गये हैं। किसी वस्तु, किसी दृश्य किसी क्षण को भूल कर अब किशोर मन के बावरे नयन अपने टीचर के मुख को तन्मय हो ताका करते हैं। कैसी तो अतृप्ति है उनमें ! कैसी तो लालसा है उनमें ! बैठे-बैठे हर क्षण के आगे पीछे उसकी प्यारी प्यारी सूरत ही

नजर आती है। उस वक्त मन कहता है कि केवल उसका देखू—उसको सुनू ! अब उसे विश्वास हो गया कि उसकी किशोर कल्पना में वही है और उत्सुकता में भी ! यह कैसी मनोदशा है, पता नहीं। उससे जुड़ घणा को स्मृति में ताजा कर के वह बार बार स्मरण करता है जैसे यही उसकी नियति है। निश्चय ही यह राग अनुराग की ऐसी रेखा है जिसमें जीवन का अनोखा सौंदर्य बाधित है।

परन्तु मिस तवर पढाती बहुत अच्छा है। उसका ढंग प्रभावशाली है। जैसी प्रशंसा सुनी थी, उसी के अनुरूप वह निकली। नि संदेह अब नाई की पढाई में अवश्य सुधार होगा। आशा है आगे उसका रिजल्ट भी मनोनकूल रहेगा।

वैसे जिसका सारा ध्यान लडके को पढाने में गुजरता है फिर वह भला बात बात पर होंठों को दबा कर क्या हँस पड़ती है? शायद इसलिए कि वह लडके की प्रत्येक गतिविधि से परिचित है। इस ओर से वह सतर्क है—सावधान है। यह उचित ही मालूम देता है।

'मैं चाय के लिए कह हू।' अचानक बाधा देकर सतीश ने कहा।

इस व्यवधान से नीलम की भाव विभोरता को आकस्मिक धक्का लगा। अपने मुख पर उसने गम्भीरता लाने की चेष्टा की।

'देखो मुझे कोई अभी अगर डाक्टरी की परीक्षा में बैठने को कह दे तो सिर्फ बुद्धू की तरह उगलें झांकने के अतिरिक्त मैं क्या कर लूंगी। हां, यदि मैं पूरे मन से कोशिश करूं और पढाई में खूब जी लगाऊं तो कठिन से कठिन वैतरणी को भी सफलता से पार कर लूंगी—ऐसा मेरा विश्वास है!'

सतीश ने सिर ऊंचा करके यह जानना चाहा कि टीचर ने अभी अभी जो कुछ कहा है वह किस सन्दर्भ में है? जो भी हो, उसने भी

मजीदगी स उत्तर दिया—"आप जिस वाक्य का अर्थ समझा रही थीं, वह मेरी समझ म बिल्कुल नहीं आता।

उसका नराश्य भाव देखकर नीलम धीर म हम पडी।

"बस, तुम्ह यही वहम खाय जा रहा है।" उसन कहा—' मन भन की कोशिश कराग तो कोई न कोई सूरत निकल आयगी।

जी ।"

बिल्कुल।" गहरी आत्मीयता की दृष्टि लडक पर डालकर मिस तवर आश्वस्त कण्ठ स बोलीं— मैंन भी निश्चय कर लिया है कि तुम्ह मैं परीक्षा म जरूर पास कराऊ गी। तुम्हारी सारी जिम्मेदारी अब मैंन अपने ऊपर ले ली है तुम चि ता मत करा ।'

नीलम के स्वर म आत्म विश्वास से भरा सकल्प बाल रहा है या और कुछ, शारदा दवी उठी बठी एका एक तय न कर सकी। नीलम का अध्यापकीय मुद्रा म पढना उस भला लगा। जिस दुश्चि ता से वे आज तक परशान थीं सुयाग मे उसका निदान हाथ लग गया। इसम स देह नहीं।

× × ×

पहली ही दृष्टि म मिस तवर समझ गई कि उसका छात्र साधारण सा अनुल्लेखनीय प्रतिभा का धनी है। सामा य से कुछ ऊपर बुद्धि और काम चलाऊ विवेक। यह कहने म किसी भी तरह का सकोच नहीं है कि उस स्तर पर लान के लिए खूब परिश्रम करना पडगा।

ताज्जुब है कि उसम सुशिक्षित घरा क आधुनिक लडकों की तरह इतना खुलापन नहीं है। अमुखर सकाच के प्रभाव स वह धीर धीर बातें करता है आखा का कुछ नीचे या तटस्थ दिशा मे रखते हुये। बातचीत के दौरान उसके नत्र ऊपर उठकर अपनी टीचर की दृष्टि स

कभी-कभी टकरा जाते है तो जल्दी ही अपने आप मुड भी जाते हैं जैसे वे एक दूसरे से मिलना कतई पसन्द नही करते ।

नीलम पढना के बीच बीच मे निर्विकार दृष्टि उठाकर आशंकित स्वर म पूछ लेती है— समझ म ता आ रहा है न ?"

"जी, बिल्कुल !"

प्रत्युत्तर म सिर्फ गर्दन हिलती है और कुछ नही ।

एक दूसरे से अलग और परस्पर अनजान बनकर वे आमने सामने ऐसे भावहीन से बैठे रहते हैं कि उनके बीच म छिपे किसी रहस्यात्मक सम्बन्ध-सूत्रो को खोज निकालना जैसे टेढी खीर है ।

किन्तु थोड दिनो म यह भ्रम भी दूर हो गया ।

शायद ऐसे ही शान्त और मयत क्षणो म अनाम सी चाह अथवा अपरिचित सा अनुराग स्वच्छ हृदय के सिन्धु म मचलने लगता है । उत्ताल तरगे उठ उठ कर खूब लम्बा विस्तार ले लेती हैं । सवथा नवीन भावनाओ का सूर्य आत्मा के अन्तरिक्ष पर चमकने लगता है उसमें है नया दृष्टि-बोध ! ज्वार की लहरो का उद्वेलन कोई नया अर्थ दे जाती है इससे नीलम अनभिज्ञ नही ।

और तब ?

आज नीलम सतीश की ओर एकटक देखती रही, फिर मृदुल हसी के बीच बोली—"तो ठीक है, पहले तुम जितनी देर मन म आये मेरा चेहरा देखते रहो । मैं कुछ नही बोलू गी ।

किशोर वय का अधगिना कीमाय सुनते ही कॅप गया । लगा जसे उसकी चोरी रगे हाथो पकडी गई हो । वह अभी तक बडी त मयता से खोया सा भाव लिये किसी सुकुमार रमणी की मासल, गोरी और कदली जघा को मानो लोलुप निगाहो से देख रहा है । उस पर झीना-सा वस्त्र

लहरा रहा है। अव्यक्त और अज्ञात से सुख में निमग्न उसकी भाव विभोर आकृति देखते ही बनती है।

लेकिन उसकी गर्दन अब किसी अज्ञेय सकुच भाव से भुकती चली गई।

'लो छू लो मेरा हाथ। इसमें कोई बुराई नहीं।'—मिस तवर सहज भाव से कहकर पुन हंस पड़ी।

गोरी गोरी कलाई को अपनी तरफ बढ़ते देख सतीश का लज्जालु आनन क्षण भर म गुलाबी आभा पा गया। मानो एक दिव्य ज्योति सक पकाये नेत्रों म चमक कर तुरन्त हृदय की गहराइयों मे उतर गई। साथ ही दुर्जय भय और सकोच की लहर भी उसकी शिराओं म दरार डालती चली गई। इस आकस्मिक और अप्रत्याशित दोहरी मन स्थिति को क्या कहे जो अनुकूल और प्रतिकूल भावना से ग्रसित है। अब किसी भी तरह वह स्वय को संयत न रख सका।

'वाह! तुम कैसे लडके हो!''—इस बार जब नीलम ने मुह खोला तो हल्की सी प्रताडना का स्वर मुखर हो गया—'यू तो पढ़ाई के बीच म मुझे एकटक निहारा करते हो पर जब मैं तुम्हे पूरी छूट देने जा रही हू तो अकारण हिचक रहे हो। यह कैसी आदत है तुम्हारी ?''

जैसे हरा भरा वृक्ष शीत लहर की चपट मे आ गया हो ऐसा ही लगा। लड़का एकदम बुझ गया। देखते-देखते उसका चेहरा निस्तेज नजर आने लगा। यह तो स्पष्ट है कि उससे गलत हो गया। शायद टीचर के पवित्र और निश्छल विश्वास को कहीं भीतर ठेस लगी है तभी वह ऐसा कह रही है।

एक अजानी-सी अपराध भावना की तीखी कील उस के हृदय स्थल मे गड गई। उसके मुह से अब कोई भी शब्द नहीं निकला।

तनिक ठहरकर नीलम उसे अपलक देखती रही कदाचित् इस उद्देश्य स कि लडके पा आत्मविश्वास एव आत्मबल पु लौट आये। लेकिन निकट भविष्य म इसकी लेश मात्र भी सम्भावना नही लगी। कोइ अपरिहाय विवशता है, जिससे वह फिलहाल उबर नही पा रहा है। अत वह सकोच रहित बनकर बोली—"तुम ता मुझे छू नही रह हा। अब दखो, मैं तुम्हारा हाथ पकड रही हू ।'

अचानक सतीश के अदर पता नही कसी दुदमनीय शक्ति उजागर हा गइ। उसके प्रभाव से वह उतावली म उठा और घूमकर भागन की चष्टा करन लगा।

चालाकी से भरी उसकी यह कमजारी मिस तवर तुरन्त भाप गई। उसने जल्दी मे लडके के दोना हाथ पकड लिय और उसे वापिस अपन स्थान पर बठने का मजबूर कर दिया।

'बठो। कहा भाग रहे हो ?"

इसके साथ ही टीचर के मुह से हसी का प्रपात बरबस बरस पडा। अब लडका निरुपाय हाकर उसमे डुबकिये लगा रहा है।

अपने टीचर के चेहरे की आर दखने की हिम्मत अब सतीश मे नही है। परन्तु इस बार, इस स्पश से पूर शरीर म एक उत्तेजना पूण झन झनाहट दौड गई है—आश्चय ! उसी अनुपात म दिल की धडकनें भी तेज हा गई। इस बीच उसका खिन मन तथा अशान्त चित्त अनोखी मधुरता मे भरने लगा है। निसन्देह यह परिवतन कल्पना के विपरीत है। इससे अतमन मे आशा आकाक्षा के नय अकुर फूटत हैं। दमित कामनायें अदर ही अदर वासन्ती पवन की तरह लहराने लगती हैं जा पात शून्य वृक्ष का नया जीवन प्रदान करने की अद्भुत क्षमता रखती है।

क्या देखने की लालसा से भरा सुख साकार रूप म उसके पाश्व म बठा है ? सुदर चेहरा ही नहीं, सुडौल दह और होठा पर छाई स्मित

मुस्कराहट भी क्या उसकी बाहु के घेरे में आ गये हैं ? क्या यही वह सुख एवं आनन्द का अनोखा फल है जिसकी अभिलाषा स्वप्न में भी प्रत्येक किशोर के दिल में बनी रहती है ?

अपनी कोमल हथेलियों से लड़के की बाहों को दबा कर नीलम अकृत्रिम मुस्कान के बीच बोली— वास्तव में तू है एक अजीब लड़का। मैं कुछ कह रही हूं और तू सुनता ही नहीं ।"

मानो लड़के के मुंह से एकाएक जबान गुम हो गई। शायद वह उसे खोजने में मशगूल है।

कुछ पल ठहरकर आत्मीयता के भीगे स्वर में टीचर ने फिर कहना शुरू किया— 'अरे पगले इस तरह देखने से कौन सी मैं भस्म हो जाऊंगी। मैं कोई आम की बूंद हूं जो हाथ लगने से गल जाऊंगी। एस मैं भी तेरी तरह हाड़ मांस का इंसान हूं इसलिए व्यर्थ की हिचक और संकोच की कतई जरूरत नहीं। जब हम एक दूसरे से अच्छी तरह परिचित हैं तो फिर यह लुका छिपी क्या ? रोज रोज इतने पास बैठते हैं तब यह दुराव कैसा ?"

प्रश्न पूछकर नीलम ने लड़के की आंखों में झांका किंतु उसे निरुत्तर देखकर वह अब चुप न रह सकी। अपने दृष्टिकोण को अधिक स्पष्ट करने की इच्छा से उसने आगे कहा— यह एक प्रकार का मानसिक और बौद्धिक पिछड़ापन है। यह मन्द-बुद्धि तथा संकीर्ण स्वभाव का सूचक है। यह आत्म हीनता, संशय और अनास्था के साथ साथ अपराध मनोवृत्ति को बढ़ावा देता है। इस कारण यह ग्राह्य नहीं है। हमें इस तरह के दुच्चेपन से मुक्त होने का प्रयास करना चाहिये ।"

इस बार सतीश ने साहसपूर्वक अपना सिर ऊंचा उठाया। उसने अचम्भे से देखा कि टीचर के मुख पर अनोखी ही नहीं, असाधारण दीप्ति है। उसकी सहमी हुई संयत मुद्रा ने पहली बार ज्ञान की गरिमा

से भरी भरी नीलम की आखे देखी। उनमें नया बोध है नया विश्राम है।

सतीश असमजस की स्थिति मे ऊपर उठ नही पा रहा है, अत मिस तवर सहृदयता से मुस्कराई और बोली— आज मे हम एक दूसरे के मित्र हैं । क्या ठीक है न!"

टीचर के मुह से एकदम नई बात सुनकर सतीश क्षण भर के लिए सामान रह गया। फिर थोडी देर ठहरकर उसके अधरो पर भी स्नेह पूर्ण मुस्कराहट खिल उठी।

'अच्छा ठीक है ।"

टीचर से मित्रता ! बिल्कुल नया विचार ! वह अस्पष्ट सी मलिन घुध जसे अपन आप छट गई। उसम यही पर भी विकार की एक रेखा तक नहीं। अब नि सकोच भाव से वह अपनी इस सलोनी टीचर को देख रहा है और मद मद मुस्करा रहा है—मानो सुबह की धूप!